अध्याय: एक

शिल्प-विज्ञान एवं कार्य-शिल्प
शिल्प एवं भ्रं ग्रामीण शब्द है। क्षण तय जीवन में टेक्नीक शब्द
प्रयोग है। टेक्नीक के श्री हर्वेस्ट, गा, बनामान तथा प्रकाश
शब्दों का भी प्रयोग होता है। क्षण प्रयोग पूर्व-अन्तर्गत सभी प्रकाश की क्लास्तों
के तन्त्रों में प्रयोग बाता रहा है। आधुनिक युग में भी क्षण प्रयोग प्रकाश
विभाग का समय स्थापना प्रकाश करता है। ऐसे शब्दों में इसी प्रकाश
की गयी है। कौनसा कॉन्सैट्रेट दृष्टि है जो की बाल्कुल की व्या-
हटों का समय स्थापना में प्रवेश शान या प्रवेश वैकल्प का परिवार करता गया है।
क्षण तन्त्रों में जो क्लास्त की शिक्षा प्रकाश की नियम का प्रदर्शन अथवा प्रवेश
क्लास्तों में क्लास्त प्रभावित की "प्रवेश" की भी तंत्र की गई है। स्पष्टत
है की क्लास्त की व्यावहारिक क्लास-वैकल्प के साथ ही लोक धर्म, को स्थापना
का स्थापना प्रवेश करने की जरूर भी गई है। इसका दास दृष्टि है जो की व्यवस्था
को रोि, "प्रवेश", दृष्टि और क्लास का परिवार करता गया है। जिसे माध्यम ते स्थापन की शिक्षा का तकनीकी आयामण की
पूर्ण करता है। अब भी अपने प्रयोग के क्षेत्र में स्पष्टता अर्जित करता है। ऐसे
उत परिशिष्ट प्रेक्षा अथवा प्रेरण का भी परिशालक माना गया है फिल्म का प्रयोग प्रायोगिक मनोविज्ञान में दिखा जाता है। कौशल के लोग शरीरिक विधि के प्रयोग की बनाते, क्षणात्मक अथवा तकनीकी कौशल का भी परिशालक माना है फिल्म के दृश्य विषय का उपयोग करके उसका प्रस्तुत किया जाता है। 2 वेस्टर्न कलात्मक फिल्मान्या में दर्शन अथवा कृतियाँ का फूड ट्रेन शामिल हैं।

उसमें बताया गया है कि "प्राक्तिक भाषा में हो तेक्नीक" और फ्रीक भाषा में "टेक्निकाल" शब्द की संग्राम तो जाना जाता है। उसमें कि उस प्रेरण की संग्राम दी गई है। फिल्म के मध्य तथा रचनाकार तकनीकी विद्वानों के निष्पादन करता है अथवा अन्य कला करने के आयाम मानविकी के स्तरों पर विद्वान करता है। फिल्म के पायलैंड के लिए आयाम का प्रेरण का परिशालक माना गया है। इसका तत्परत्व यह है कि फिल्म के त्रूमें कलाकार की इंसानता, उद्देश्य धारित में शिल्प क्षेत्र में होता है अर्थात कलाकार का प्रयोग मानने के लिए या न तिनियम के लिए। 3 प्रॉडक्शन फिल्मान्या के संरचना-अनुशासन की कोशिश में फिल्म को प्रशिक्षण अथवा विशेष के तनाव में विशेष त्यों पर विद्वान करता है। ये ज्यादा स्तर के दृश्य की सत्ता अथवा अन्य फिल्म दृश्य कार्य करने का तत्परता करता है।

इसी तनाव में इसे स्तर का तकनीकी का अथवा संस्कृत का भी दृष्टि माना गया है। 4 ओमन-विवरण आप्टेका की दृष्टि में "शिल्प, संस्कृति का अथवा तकनीकी का पर्याय है। इसे कौशल, प्रवर्धन, पुराता, आदि तकनीकों तथा उनकी विद्वानों के जिन्दगी के रंग का जिन्दगी का रंग का रंग का रंग का रंग का रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग की रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग की रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग खूब रंग
तीस्रे हिन्दी शब्द तागरेम-तक तक लाई गई दशकारी, कारीगरी
अथवा कला तंबाकी व्यक्ति का पवया माना गया है। 7 छात्र हरदेव बाहरी
ने "तकनीक शब्द को प्रवीण, शिल्प, पदरत, रीती शैली, काव्य पदरत,
रचना पुराणी, तंत्र-वादी और कला, पद्मा के अर्थ में ग्रहण किया है। 8
वेम्ज की हिन्दी गीतों में तकनीक शब्द के लिए "तकनीक, प्रवीण, तन्त्र,
शिल्प, पुराण, पुराणी, टंत्र और तरीक अथवा पवया का पवया मिलता
है। 9 बड़ा हिन्दी गीत के अर्थार चित्रित हो अधिकार "हाय हे कोई वस्तु
िहार करने अथवा दशकारी या कारीगरी है। 10
शब्दकोशों के इस विवेचन युवकों को देखने ते प्रायः यो हिन्दीकोश हमारे
समय उपस्थित होते हैं। अंग्रेजी शब्दकोशों में तकनीक अथवा शिल्प को तारीख
तर्क और कला दोनों समय करके विपरीतत किया गया है पर संस्कृत तथा
हिंदी शब्दकोशों में इस मूल रूप से केवल कला अथवा कारीगरी समय
करके विपरीतत किया गया है। इन हिन्दीकोशों में वो अंतर पिकार्स बहुलतका
हरुकार्य प्रवीणकर्मी और पूर्व काल से तारीख संबंधी स्थापत्यकर्मों के अर्थ से
समझ हुआ है। संस्कृत आधार म्पा कार्य-सर्वो और काव्य को विशिष्टत
प्रतिमा प्रशाल माना गया है और कला को उसके निकात गोट म्पा प्रसिद्धित किया
गया है। प्रवीणकर्मी हिन्दीकोश के अंतर संकेतक क्लास्क का ही एक अर्थ है।
वर्तमान समय म्पा संकेतक को विशिष्ट धारावर है उत्तर का उसे अन्य सभी
क्लास्क के समय संकेतक और परसंपन की पुर्वा वा पता है। संकेतक-सर्वो
से समीक्षा राज्य ख़ाल क्लास्क को विशिष्ट विश्लेषण से उपस्थित भी हुई है।
यही कारण है कि आज स्तंभत काव्य भाषा की कला और तारिख की मैत्री वृत्त भावना पर प्रयास चिह्नित करा है। इससे स्पष्ट है कि बिल्कुल, शब्द, प्रीति, रीति, शैली, तकनीक, कला, पद्ताल संदर्भों में प्रयुक्त हुआ है और क्यों नहीं, प्रायः, प्राणात्मक अवस्था तंग का भी सूचना नहीं करा है।

शिला: परिसरण, स्त्राव व स्वर

पूर्व पुष्टियों में हमने इस बात को देखा था कि कोशिष्ट आर्थ में शिला, प्रीति, रीति, शैली, तकनीक, कला, निर्माण शैली, कारोबारी वाणिज्य शब्दों के अर्थ के पावक के लिए में प्रयुक्त हुआ है। वर्तमान सन्धर्मों में उसका अर्थ पिछलाए हुआ है। अब इसका प्रयोग तारिख के सन्दर्भ के स्वर्ण रंग का समानर्थी कार्यों को समझने के लिए रिसोट बनाने का लाभ है। यहाँ हम सक्षम हैं स्पष्ट व्यक्तियों में सिखा है, "हम उस तकनीक की भी स्वर्ण करने वाले पारंपरिक रिसोट योग की सन्दर्भ में विघ्न गया है। यथार्थ तकनीक की कार्यान्वयन के संग्रह की आवश्यकता में उसकी तही काव्य-प्राणी की गायक के सम्बन्ध होती है।" इससे आकाशवाक्य नहीं राहु रिकार्य के छेन में क्लासिक और रीतियों शब्द रिकार्य स्वर्ण स्वर्ण होते हैं। पृथ्वी का सम्बन्ध सन्दर्भ के पूर्वतंत्र स्वर्ण है। अबीक दूसरे या सम्बन्ध अलग बोध, आस्वादन और आनन्द होता है। कला के पूर्वतंत्र स्वर्ण के लिए मात्र अप्रभात अवधि को आकाशवाक्य होती है। इन्हें के गायक हैं वह अपनी आमतौर स्वर्ण शब्द प्रयास करते हैं। स्पष्ट है रिकार्य कला के सन्दर्भ का अप्रभात है।
ताहत्य स्थायण की गिथा में वह निर्मलता का पवित्र बन जाता है। जीवन को ध्यान में रखते हुए आर्नेल्ट ने कथा को विपुल झिंक सीने का पवित्र माना है। इस आधार पर रचना के लिए तकनीक की आवश्यकता स्पष्टतः लिखी है। यान जोनसन ने जीवन को ध्यान में रखकर लिखा भी है कि "विश्व संसार ही वह तात्पर्य है जो लेखक को, अपने लिखक करते हुए समझ अनुभव को कला में प्राप्त करने का माध्यम प्रदान करता है। वहीं जीवन की ज्ञानमयी कृति की ओर उन्नति बनाता है, उनके प्रत्यय का उन प्रयास करता है और उसे उन्नीत करता है। उसके उन्नीत तत्त्व को उपयोग करके उसे अन्तर्विद्य तत्त्व स्थायी प्रदान करता है।" 12 कार्यरत ने तकनीक को चालाक तन्द्रा में ज्ञान त्वरित कहा है और इसे लोक-धर्म रसायन के साथ ही रचना करने तरंग तन्द्रा के माध्यम में कही विशालता है। इस दृष्टि से समीक्षा शास्त्र में प्रवृत्त तकनीक के विवेचन परिवर्त्य के अपील और उनकी वियाल्स ते भी हम पुरूषों देखते हैं। ।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।।.
व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि "काव्य विधान काव्य का विधान है। जियता करने की विधि से वेल जीता संभवितु हुस-हुंड़ों का विधित्रु ग्राम उसके भीतर भा जाता है और उस ग्राम का आत्म पंक्राश काव्य-प्रायव है। हाँ आस्थो भी काव्य बलिप का विधातर कियता करने से तेल उसके गुण-हुंड़ों को जांच पहलाल तत्व मानते हैं। परन्तु प्राय: अध्यनों में यह जाता है कि लोग जब बलिप की बात करते हैं तो उनका दृष्टिकोण रक्षित हो जाता है कि और वे ऐसे को उसके पूर्व चक्क के विवेक-स्वतंत्र तत्त्व ही रोलित कर पेटे हैं। उदाहरण के लिए हाँ प्रमुखल शम्मक के काव्य-बलिप के अभि-ध्याल स्तंभ गर विपाय को देखा पर जाता उनके अंक्षित "स्त्य तर्कना की विशोषण वोम्बना को बलिप करते हैं। बलिप स्याक्जार का कौशल है। किन्तु यह विधानधारा, बहुत विवेक तत्त्व नहीं है। प्रथा करने, बदने और लोपने वाले व्याख्या बलिप के तारगों तत्त्व को नहीं तात्त्व पाते हैं, बलिप लोपित होते के अंक्षित जब बलिप को मात्र श्रद्धा का पवार्त समझक अना गत देते हैं। मार्क्षोर ने यह विधान क्षेत्र रखा है। अपने स्वदेशी शब्दों में लिखा है कि "जब तम तकनीक की बात करते हैं तो प्रायः तमी बातों को उसमें समूचे समूचे हैं, क्योंकि तकनीक वह माध्यम है जिसके द्वारा लेकर अपनी अनुभूति या विधं वसूल पर अना ध्यान केन्द्रित करता है। तकनीकी ही यह तात्त्व रहे जिसके द्वारा यह अपने विधान की गोष्टा, परोक्ष और विधात करता है।
अपने अर्थ को प्रेषित करता है और उन: उसका प्रयास करता है। कार्य-
प्रतिलक कार्य की समस्या विधाओं में निहित औरश्चयन का एक प्रकार होता है।
शीर्षक यह रचना के आरम्भ से अंत तक उसके प्रतिलकरण की प्रक्रिया में संगठन
पारा जाता है। इसी जो ध्यान में रखने के लिए उन्होंने जो विश्व वस्तु को
विद्यालय में दालने की प्रहर्या का पथर्यार माना है। 17 कुछ लोग ऐसी की तरह
ही टेकान के भी उठते या बुड़े होने का प्रयास उतारते हैं। व्याख्या में यह प्रयास
बहुत ही बोधन है। जैसी तकनीक का तात्पर्य होता है, केवल तकनीक, जो
विकास वस्तु के निर्माण, प्रतिपादन और जानकारी को क्लासिक दृष्टि से प्रतिपादन कर
तकनीक है। इसके प्रश्नोत्तर प्रतिपादन, प्रतिपादन तकनीक का परिपार्यक
होता है। इसी बात को ध्यान में रखने की गाज़ा दादास्वरी ने लिखा है कि "प्रस्ताव
विधि रचना की उन प्रश्नोत्तरों का शेखर-बोध है पिनके उद्घाटन पर रचना
वृत्त द्वारा पुरा हो बुढ़ि है अभ्यास प्रश्नोत्तर प्रश्नोत्तर के साथ लेखी द्वारा अस्थायत हुई
है। 18 यदि यह कहने में होने कोई संकोच नहीं होना पार्श्व पर विश्व प्रविध
का रचना के केवल एक पद से संबंध नहीं है। लेकिन ख़ुदाय समस्या रचना
प्रहर्या से है। अर्थात् प्रविध-प्रविध का अर्थ तभी से आरम्भ हो जाता है जब
तक वातावरण नवर्तकरण से शेषिट होना आरम्भ हो जाता है। तर्क प्रयास यह
अर्थात् शीतोष्ण इसरोल की आर्धक्षेत्र भूताकुक आयकर
स्त्रिया के लिए मात्रा में ताप पेदी है। लय द्वारा से ताप ही प्रमाणी माध्यम,
शाया, रिस्टा, प्रतिलक शाया की बोध, प्रारम्भ हो जाती है। क्ष दरम्यान कभी
यह अनुभूति को प्रभावित करती है क्योंकि अनुभूति अपनी प्रभावित बनाकर आर्क्षक
आर्क्षक के ताल्पर्य संग की जोड़ी, रोमनियत या गुरूलता ने नहीं, आपकी
तक्ष्यामती होने से हैं। दोनों दोनों संग में वाध्यक प्रस्वरु पत्ता नहीं कर पूरा, तब तक
उसका कार्य अन्तराता स्वयं भरता रहता है। भिष्मपौर्ण वे क्ला के यो तीन
फर्क बताए हैं, उन तीनों फर्कों में शिल्प-विद्या की महत्व पूर्ण शूरिमा होती
है। तपस्वी रचना प्रवीण या यह तीन रहती है। स्वामार अभिमुखतात्करण के
उस्तम और तक शिल्पविद्या की तत्क्षता बनी रहती है। मोटे तोर पर
शिल्प वह विवाह है जो अनुभूति के फर्कों से लेकर अभिमुखता के उस्तम युग तक
तत्क्षत रहता है। इसी की सहायता और संबंध से रचनाकर अनुभूति अनुभूतियों,
मन्: प्रभावित क्या विवाहों को पूर्ण स्वयं बेबर और क्षण मूर्ति को अनुभूति,
ताबारत को स्वामारक व्यास करने के ताल ही उनकी उद्धाराय संवेदन
और सोनार्ध मुलक स्वयं प्रस्थत करने अपने आत-प्रात के विशेषता में स्वयं के
उपरिपत करने की दायित्व पर भरी शूरिमा निम्नात्ता है।

उपरिस्थत प्रदेश को विवाह में रखते हुए कम आगे लिखित निकलों पर
पढ़ते हैं—

1. शिल्पविद्या वह साधन है जिसके माध्यम से अनुभूति का स्वायत्त संभव
होता है।

2. यह विवाह को पररूस, तमावन और उसका कल्पक स्वयं में अभिमुखता
करने का माध्यम है।
3. यह कवि के अभिव्यक्ति विश्लेषक तपेतन प्रयत्नों का प्रतिलिपि है।

4. यह यह प्रीतिया है जिसके माध्यम से रचना अपनी तपस्वी विचारणाओं, भूगर्भाओं के साथ स्पष्टित होती है।

5. इस तरह संबंध कृति के लघुमी पद्म से होता है।

शिल्प-विद्या स्व-काव्य-विद्या

किसी अनुरूपी को, भाव को साधित शर्य निश्चित आकार-प्रकार प्रदान करने के लिए वो विधान प्रदूषित होता है, वहीं उस कला की शिल्प विद्या है। परन्तु शिल्पविद्या सत्स्पा और यह नहीं है, निश्चित तौर पर यह श्रवण स्पष्ट और परीक्षणीय प्रेमिता है। अश्वकी दलहा तापेश प्रेमित के फलत्थम ही महत्व, केवल तथा, सुन, महत्त्व आदि अन्य-अन्य लय में दिखाई पड़ते हैं।

कहने का तात्पर्य है यह कि तारिकन के विद्युक्त लय है। इन विद्युक्त लयों में भिन्न-भिन्न प्रकार की शिल्प-विद्याओं का प्रयोग होता है। शिल्प विद्या के माध्यम से ही यह विशेष तारिकन लयों के उत्तर को समझ पाते हैं। तारिकन का श्रवण महत्त्वपूर्ण लय के काव्य। "काव्य कृति के निमित्त में रचना उपलब्धियों द्वारा काव्य का टॉपा दैयार रिमा जाता है, वे सब काव्य के शिल्प तत्त्व को बताते हैं। 20 काव्य-शिल्प कृति को रचनात्मक दृष्टि या वृजन-विद्या है। काव्य शिल्प के समानार्थक उद्देश्य है, रचना-विधान, शिल्प-विधान, लय-रचना, रचना-कौशल, काव्य-सौन्दर्य, अभिव्यक्ति-विधान अभिव्यक्ति-सौन्दर्य आदि। 21
शिल्प-शिल्प ऋषि शेली

शेली और-शिल्प को लेकर ताज्जुब समझा के क्षेत्र में जबकि आदिन्त के स्थापत्य व्याप्त है। कभी-कभी शेली की ही शिल्परीति मान लिया जाता है और कभी शिल्परीति को शेली के पर्याय के रूप में समझा जाता है। रंगों भेद के बाद नहीं है। न तो शिल्परीति शेली का पर्याय है न शेली ही शिल्परीति है। परन्तु यह दोनों पर दोनों में आंतरिक संबंध भी है। शेली का संबंध भी आंतरिकता की तरह है। दोस्तों और शिल्प का संबंध भी आंतरिकता के संबंध मात्र है। इसी संबंध के लिए इनकी आंतरिक संगठन प्रवृत्ति तथा आंतरिक संबंध निर्माण करने की आवश्यकता होती है। रेडियो और शेली के “रिस्कल” संगठन के बनने है। पूर्वोर्ड भाषा में इसका अर्थ शेली की पदार्थ अभ्यास अपने को आंतरिकता करने की पदार्थ होता है। इसका प्रयोग इन्हीं अभ्यासों में किया जाता था। रेडियो भाषा में इस शब्द का अर्थ विस्तार हुआ है। इसका अर्थ अपने को आंतरिकता करने का उपयोग तरीका हो गया है। पूर्वोर्ड आयाम ने इस “शेली का पदार्थ अभ्यास अपने अभ्यास को शेली में आंतरिकता करने की विविधता की संहा दी है। रेडियो संगठन ने तत्काल शब्दों में स्वीकार किया है कि शेली प्रश्न की प्रतिपादन है। यह सच है कि शेली में स्थानांतर को वैयक्तिक रोलोग्राफिक विशेष रूप से प्रतिक्रिया प्रदर्शित होती है। रेडियो भाषा में यह शब्द के पिरामिड का स्वरूप शिखर है, स्थानांतर की स्वरूपित उपलब्धि
और क्ला को स्थायित्व प्रदान करने का प्रमुख तत्त्व है। 26 शैली में भ्रमरता के लिए कोई स्थान नहीं होता क्योंकि यह रणनाक के मर्मदंड की प्रामाणिक और तथी अभिव्यक्ति होती है। शैली और श्रवणिद्धि में सम्बन्ध होता है। वे एक दूसरे का संगीतधार परिवर्तन करती है क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक ही होता है। प्रतिक्रिया: शैली व्यक्ति सार्वभौम होती है, उसमें लेख का वैशिष्ट्यक प्रकृतिवात्स होता है या अर्थात् यह से प्रतिक्रियात्मक रहता है। 27 लीलिहिताकार अपनी प्रक्रिया अनुसार विभिन्न का प्रयत्न करते हैं और उपलब्ध शिल्प में मनोभाव की तक्त अभिव्यक्ति के लिए व्रजत्र घटाता है। वह स्यायांकूल भावा, विम्बा, प्रतीकों का संगठन करता है। उपलब्ध या परिप्रवर्त ग्राम्य स्प-प्रवाण में उसके भाव, विधार, अनुभव नहीं आते प्रत्येक: उसको लाभार्थी नहीं होती। उस दर्रा में वह परिप्रवर्त भी क्षत है। दूसरी तरफ शिल्प व्रजा सार्वभौम या दूसरे शरण में वह लो लिपि सार्वभौम होता है। इसी क्रम की नहीं रणनाक को भी प्रभावित होना पडता है। उसके लिए तदनन कोवर विभिन्न व्रजा की मांग के अनुसार उसकी प्रभावितता के रूप में रखने अनुभुल तत्त्वों के प्रयत्न करना अभिव्यक्ति बन बाटत है।

पूरे शैली का विषय-गतिविधि तत्त्व तकनीक ही होती है, जो उसे विधि स्प-प्रवाण करता है। शैली तकनीक की बहुत अयोग्य में आता होती है।

तकनीक शैली की नहीं होती। इसका प्रयत्न कार्य यह है कि तकनीक रणना विधि के समय संपत्ति से साथ-साथ होता है, जबकि शैली मान उसके स्प्यान से।

शैली प्रस्तुत होती है और तकनीक विधि गत। तकनीक अभिव्यक्ति और रणना दोनों से सम्बन्ध होती है और शैली केवल अभिव्यक्ति है। तकनीक का
संबंध स्य के तात्त्व उसके संपन्न स्तंभों के भी होता है, कबीर शेली का केवल अभिम्युक्ति है। तक्रिक में स्तंभों के तत्वों पर पियार रिक्षत बात है, पर शेली में केवल अभिम्युक्ति के तत्वों पर। शिल्प डा अभ्याय सम्पन्न संघटन का अभ्यय होता है। अभ्याय उसका धरातल प्राप्तत्व और ध्यान भर बन जाता है, पर शेली का संबंध केवल अभिम्युक्ति के विनिष्ट्य स्य से होता है अभ्य वह सीमित होती है। शिल्प प्रीति में प्रक्ष कल्य और पियार चुनें का पियार करना सम्पन्नपक्षें है, कबीर शेली में केवल उसकी भावान्वित अभिम्युक्ति और तक्रिकी कारीगरी के बात पाई जाती है तथा वह विनिष्ट्य पियार होती है। निक्ला: निरपेक्ष की प्रक्ष कल्य पाई पाई होती है। कबीर शेली की प्रक्ष आत्मशर्य की। शेली में लेबक का विनिष्ट्य पियार होती है। 29 तक्रिक में स्तंभ के दूसरे दोनों पर पियार रिक्षत बात है, पर शेली में केवल अभिम्युक्ति का बात उदाइ बाती है। शेली स्तंभ है की शेली शिल्प की अनुमानित होती है, शिल्प शेली का नहीं! 29

**शिल्पविद्या और अभ्याय**

**स्तंभ** पियारत रिक्षत बात है कि शिल्पविद्या और अभ्याय अभ्याय स्तंभ का भी निकट का संबंध है। स्तंभ को नवोत्तर की शिल्पविद्या के परिवर्तन का प्रभाव कार अभ्याय है। पर भिक्षुलकर्ता यह है कि इसकी और लोगों की दृष्टि प्रवाह नहीं गयी है। इस दृष्टि के अभ्याय की संबंधत व्याख्या और अभ्याय श्य शिल्प का स्पष्ट निश्चित अभ्याय है। इसके लिए एक न्यूटुटन ने स्पष्ट स्य से
निदेश प्रिया है कि "केवल अनुभूति ही उस विधार सन्दर्भित कें को उर्दा बना सकती है वो द्वित नव दाता रिश्व होता है। विधायक कपना माननी प्रिया है केवल सामने के यिमार्के के रिमाज तो शास्त्रीय पलती है, पर अभी रचना में नहीं। कपना स्वी मेलित से जोरना अनुभूति का परिवर्तन करने के प्रवाश हो तथा निर्भर रमण होता है। 30. हेनरी वेन्स ने इस ऑर व्यक्त शाकल में
निर्मल करने का प्रयत्न किया है। उनका कहना है कि "अनुभूति कभी पूर्ण अथवा अधूरी नहीं होती, वह स्वायत्त शिक्षणिक का औध्यात्मक होती है।
उसे दृष्टि से दृष्टि से संशोधन के तौर पर अनुभूति ही सामान्य से सामान्य
शिक्षण को क्लासिक रूप में औध्यात्मक करता है। इसमें दृष्टि से अधूरे तक का
अवगत होने ही अंकत होती है। इसलिए वह जीवन के रहस्यमय भाव-कोश
की आश्ना करने में सक्षम होता है। 31 यथार्थ में अनुभूति और शिक्षण के अन्तः
सम्बन्ध को समझने की दृष्टि ते उस कारण उदरय व्याप्ति महत्त्व पूर्ण है। अनुभूति
की दृष्टि में रचनात्मक में विश्वास अन्तः संदर्भों के द्वारा प्रतिपादक की निर्भर
उत्पन्न हो जाता है जिससे नया व्यक्ति ग्रहण करके वो संदर्भ रचनात्मक गानिलका
में आनंद लगाते हैं। अनुभूति की अर संशोधक रिदिता का, जो माना है
तिर्तहै, अंतः ग्रहण और स्रवण होता है। उसका व्यक्ति रिदिता-निर्देशक
tतत्त्व होता है, ज्योतिष माना प्रशंसकों के बोध का विधायक टॉने हर ही उसे
समझने रचने वाली एक्स्च द्वारा अनेकत्व के अनुसार अनुभूति के भिन्न-भिन्न
योग संयोजित होते हैं। 32 योगों के इन्हें संयोजनों को हम भाव कहते हैं।
भावों की शिक्षितता ही स्पष्ट-विवाह की क्षमता का मूल कारण होती है।
एक सीधे काल में प्रभावित स्पष्ट-विवाह के माध्यम से हर समय की सबसे
या अभाव भावों के अभिशक्तिपूर्वक प्रदान करना भी राजकीय ही नहीं होता अतः यह समय की सच्चाई से सुख गड़बड़ना भी है। विकल्प जैसे भी समय में उद्योगी
मान्यता और उसके लोगों की चर्चा ही है। विद्याधिकरण की गूढ़ प्रथा नहीं होता है तब वह योगों वाली
बात हो बाली है। यह नया की कोई संभावना भी नहीं रहती है। अतः
यह प्रभावक रचनाकार को उसके लिए हृदय योगों को समझना उचित नहीं होता है।
पिछला रचनाकार में इस समूह की सख्ती से अधिक समय होता है उस उतना ही
वक्त, प्रयोगशील, अभिव्यक्ति निर्माण रचनाकार सिद्ध होता है।

इत्यादि सारिह्य के बाद में अभाव के रचना पर विवाह प्रथाओं की रचना
के समूह में प्रतिरूपित करने का प्रयास हुआ। सत्य यह है कि समाजिक
सारिह्य में विवाहों की टक्कर और उसके उत्पन्न निक्षेपितरों के प्रभाव
विशेष आश्वासन परिलक्षित हुआ है। जान स्वीकार कि इस सार उत्तर करते हुए लिखा
है कि "यह गुण-वश्व सारिह्य सारिह्य जीवन, अवधारणा अवधारणा ऐसे शासन
करता है, जब वैदित्त के साथ ललित आदान-प्रदान की विशेषता प्राप्त करता
है, जिसमें सनंद्व उपादान अथवा उनके अवधारणा संबंधित पूरे तरह अभिव्यक्ति अवधारणा है।" होता है। 33 का उस अभाव का अधिकतम बनाने में असर हो जानें की प्रथा को प्रमाण वाली प्रभावों से अलग कर लेता। वह आदान-
प्रदान को प्रश्न मौद्रिक और गीतिक मौद्रिक दोनों होती है और सबूतना के माध्यम
से सम्पादित होती है। संवेदना की बात करने पर पियार को किचला का प्रथम उपजीत्व गाने वाले लोगों को आपरित हो सकता है। पर उन्हें यह बात होना चाहिए कि कोई भी संवेदना पियार रोहत नहीं हुआ करता। फिर भी संवेदना होती है, जिन्हें पियार तत्त्वों की पुष्पहरता होती है। ये पियार प्रत्याख्यात हर समाज का मानवीय समाज की स्थितियाँ में रचना को जगत के मूल स्वरूपों के साथ जोड़ने का कार्य सम्पादित करते हैं। परियोजना के साथ स्वरूप का सम्बन्ध परियोजना की प्रकृति के सही मूल्यांकन में सार्थ होता है। उसे कहने देने हेतु परियोजना के साथ सामाजिक स्थापित करने के लिए उसे हेतु भौतिकों को अन्याय व्यवस्था आवश्यक होता है। रचना की स्थिति में पद्धति प्रभुर्वों के बल्ले प्रस्तुत होता है। ये बिम्ब, ध्यान को आकृति करने वाले विषय के भौतिक श्रेष्ठ मानवीक स्वरूप पर अथवा उसके अन्तरण पर पूरे तल कायम रहते हैं। पर इसका संबंध वर्ण-क्रम के साथ भी बना रहता है। वर्ण-क्रम से अन्तर्न्यास और अन्तर्वास से वर्ण-क्रम का यह कार्य-प्रतियोगिता रचना में पियार वर्ण के कृत्य का साधन माध्यम लिखा होता है। ऐसी रचना भी उत्पन्न होंगी है जब रचनाकार वर्ण-क्रम और आत्मज्ञता में एक सामाजिक त्यागित कर लेता है और सम्पूर्ण क्रम का एक ऊंचा बन जाता है। केवल पियार-प्रत्ययों में ही सामाजिक रचना स्थिति की स्थिति नहीं होती। कुछ आधुनिक समीक्षक ने साहित्य शास्त्र के सन्दर्भ में सामाजिक की बात से आबादत होता है, पर उनका भौतिकों कहने के ज्ञात नहीं है। पियार-ध्यान संबंध के प्रत्ययों को अभिव्यक्त करने के लिए वह प्रवाह ही रचनाकार उसके साथ जुड़ी हुई व्यवहार करने में सबसे लाभ हो जाता है। नै साहित्य में पियार-प्रत्ययों के विवेक का जो प्रसन उठाया जाता है वह भी
के व्यापक नया रहनास्वाद अने विवाहों को क्षणिक शिथिल को भावातः व्याप्त करना अधिक सुस्थित गानता है। पर इस तथ्य को अंतर्भूत हो जाना कि विवाह सीमाओं को घेरने अभिव्यक्तिक यौन उन्नत भाषा में व्यस्त रहना जा सकता है, समस्त रहनास्वाद तथ्य को पुढ़ाना है। या यह शिथि तथा हो जाता है कि विवाह सीमाओं प्रधान रचना में भी आधुनिक संस्कृति के पर्यावरण ही विशेष अध्ययन भरता संस्करण संबंध होता है। रूपनालय नैतिकता इसी तथ्य का पुढ़ाना भी करती है। पूर्ण विवाह से निखिल करने का शिथि में भी उल्लोचक कोई न कोई स्वस्ता उसे निरूपित पाया जाता है। रहनास्वाद संघर्ष विवाह सीमाओं के माध्यम से ही रचना को दिशा प्रदान कर पाता है। रचना की शिथिल में यह है, अपने संस्कार से अधिक संभव है, पूर्ण संस्कृति की शिथिल में होता है और पैरामिक निरूपणों को गुरुत्व कर उन्हें दुर्लक्षित करने में तलाश पाया जाता है। अधिक यह यथार्थ हो जाता है तो उसी रचना प्रतीक्षा की कोशिश करता है। या यह तथा हो जाता है कि आधुनिक अध्ययन तथा हिंदू नैतिकता से संबंधित रचना के रचनाओं का रचना के शिथि से निकात का संबंध होता है।

शिल्प-विज्ञान और अभिव्यक्ति

इस बात का संबंधित विषय जा पुकारे है तक विवाह प्रधान सीमाओं में अभिव्यक्ति के विषय निर्देशक तथ्य होते हैं जिनके रहनास्वाद पुनर्विकास करता है। अभिव्यक्ति के लिए माध्यम को आवश्यकता होती है। अभिव्यक्ति कई बुकार की होती है - वैदिक, नीति शास्त्रीय, कलात्मक, माध्यात्मिक अध्यय.
साहित्यिक। देवीनिक अभियंत्रित विज्ञान का विद्वान होता है। इसमें विशेष रूप से भाषा का तत्त्वात्मक प्रयोग देखने को मिलता है। नीतिसारीय अभियंत्रित नीति शासन का विद्वान है। इसके माध्यम से क्ति, धर्मकार्य, नीति-शासन, समाज शासन आदि को व्यक्त किया जाता है। कलात्मक, काव्यात्मक अथवा साहित्यिक आयोजन का स्वस्थ उपर्युक्त दोनों प्रकार की अभियंत्रितों से मिलना होता है। इस और लोगों की दृष्टि भी गयी है और उसका विश्लेषण साहित्यिक विज्ञान की विद्वान गया है। "साहित्य के संदर्भ में आई एक सहली वेस्ल कालान्तर भाषारूपी विभिन्न विषयों के लिए नीति और कलात्मक विभिन्न विषयों काल के रागात्मक और साहित्यिक प्रयोग के। टामला पोलु ने भी इस दृष्टि से महत्व पूर्वक तथ्य का उलेख किया है। उनकी दृष्टि में भाषा मूल: तत्त्वात्मक और साहित्यात्मक होती है और उसके माध्यम से मौलिक साहित्य की सांस्कृतिक भावांशित के संदर्भ में पूर्ण: सक्षम होती है। साहित्याकार का संबंधी साहित्यसेतु विषयों के होता है। ३५ मानव जीवन कबीर न करी अपनी प्रुद्धता और परिदृश्य तब सबद के होता है। उसका अपना जीवन स्पन्दन और जीवन का अवभाव होता है। प्रुद्धता की अजिह्वारियम तथा तक्ष और ताकत तर परिश्रम करती है जब वह मानव का तत्त्वात्मक संदर्भ के माध्यम से अपने भावांशित से संबंध रोकने अभियंत्रित होती है। मानव प्रुद्धता और मानव जीवन के आत्मिक संबन्ध 'से जिल कलात्मक अनुरूप का जन्म होता है वह ज्यानमुक्त बन जाता है। बेलिस्ट का कहना है कि जीवन प्रकृति और अवभावित है और कला व्यवस्था ब्रह्मात्मा सब सर्वयुक्त है। सच्चार का यह धर्म है कि यह अपनी सर्वनामत्त्व प्रतिमा के दारा
जोवन और बाल ते ये तथ्यों को गुर्दन करें कि वे अभिव्यक्त होने के पवनात पिघलासनीय और प्रमाणिक बतात हों। अभिव्यक्ति के लिए अनुभूति की प्रमाणिकता आवश्यक तरह है। जब एक और उसे पारिपास्क के समझ समझते द्वारा में सम्यं बनाती है, उसे रक्षाबल्क रूपों में अन्तर्डूरिट प्रचार करते है तो दुर्लभ है और उसे अनो अनुभूति की प्रमाणिक प्राथमिकता का बुखार भी प्रचार करती है। अभिव्यक्ति पूर्व: रचनाकार की अनुभूति अ शिल्पक निरीक्षित होती है। कहने को आवश्यक ता नहीं कि अनुभूति स्थान: में अस्त और आगार दृष्टि होता है। उसमें अभिव्यक्ति के कवियों स्वतंत्र अभियोग निरीक्षित रहते हैं। लेकिन उनका उपयोग दर्शा और उल्लो स्व में लघुपात करता रचनाकार के शिल्प पर ही निर्धारित करता है। इत्यादि अभिव्यक्ति को क्लासिक रूप में प्रचार करने के लिए, रचनाकार की उसी प्रकार के अनुप्रयोग शिल्प के माध्यमों का उपयोग करना आवश्यक हो जाता है। यह इस प्रकार में हानिव्यक्त भाषा, हिंदी, पुरातों, रूप तथा केन्द्रीय अभियोग तर्कसनात्मक भी उपाधि का प्राय: उपयोग करने वाले विश्व उसकी अनुभूति कालाकाष प्रमाणिकता के साथ विश्वसनीय श्रेणी: से अभिव्यक्ति है। यह दृष्टिकोण विश्व अभिव्यक्ति का भी डूब होता है। रचनाकार की अनुभूति को प्रकाशित के अनुसार सफलता अभिव्यक्ति के लिए शिल्प के लाभ प्रभुत्व करना आवश्यक होता है। परस्पर अभिमृत विश्व अभियोग की रचना और वर्तमान को प्रकाश करने में अस्त दर्शाई होने के कारण उनकी सफल अभिव्यक्ति न तथापि नहीं बन पाता। इत्यादि रचनाकार अभिव्यक्ति के लिए शिल्प के उपादानों के के साथ संयोग करना दृष्टिकोण होता है। संयोग को अभी कालाकाष विश्वको
में अभिरंत हो बैसिक माध्यमों से व्यक्त होकर नये व्यवहार का वाहक बन बाती है। प्रयास: सभी नए कीम्यों में विषय के साथ प्रयोग की वह प्रमुखता खैर विश्व नया स्वभाव कर लेती है।

विलक्षण्य एक प्रयास

विषय की बात करते हुए प्रयास: लोगों की दृष्टि एक प्रमुख तत्त्व जो और नहीं बातो, जो विषय का विधायक तत्त्व है। वह विधायक तत्त्व है: दुनाय। इसका विषय के संथतन रूप उसे तत्त्वों के गहरा सम्बन्ध है। दुनाय का लोकतन्त्र तत्त्व दृष्टिकोटि है। दृष्टिकोटि जिस परिक्रमा में जीता है उसकी अपनी परस्पर और परस्परी बहुत ही तक स्थानांतर को प्रभावित करते है। इसका अर कारणान्तर से दृष्टिकोटि की रूपी दुनाय पर पडता है। आर्थिक-सामाजिक परिस्थितियों जैसे बदलती या विकसित होती साधनता है जैसे ही सोच और चिंतन की दिशा से धारावर्ती भी बदलती रहती है, भावना मानक विचारों तथा विचारों की उत्पत्ति प्रारंभ का हमारे मानव प्रारंभ की भौतिक दिशायादेशी तथा उनके भौतिक आवास प्रारंभ के साथ, वातावरणीय बीमारी के भाग है। साथ साथ तीसरे साथ उनके भौतिक परिस्थितियों के परिचय के स्वरूप में समने आते हैं। 35 ऐसी विद्याः में काव्य या कला का इसी प्रभावित होना अनिवार्य होता है। अतः देखने पर तो लगता है कि काव्य साहित्य, कला और इनमें कोई तात्विक सम्बन्ध नहीं होता, लेकिन ऐसे बात नहीं है। इनमें उपलब्ध है
यदि समाज बनाता है। इनके समझदारों की गहरी अर्थिता को समझते हुए देखता ने तो स्पष्ट रूप से कहा है कि "ये सब एक दूरे प्रभावित करते हैं। उन्होंने रिख्या - बनती है। 35 वहें का तात्पर्य कि साहित्य की परम्परा वर्तन, राजनीति, न्याय, धर्म आदि नीति और सामाजिक नीति का इतना प्रभाव पड़ता है। साहित्यकार या कलाकार के अंदर बहुत भीतर तक उसका प्रभाव समया हुआ सकता है। यह दिसा परिवेश में पता-बदलता है, उसका प्रभाव उसे इतना पर पड़ता है। इस तथ्य को चन्दन रंग और पिक्चर के पिचरों, राजनीति यादव और प्रभुवर्ती नाय रंग की वहाँ किंवा तथा खेलों और सूचिबोध की कीमत तांत्रिकों को एक साथ रखकर आतीं ना समय का सकता है।

इन कलाकारों की यदि एक ही विषय दे दिखा हाय तो भी इनके आभासित में वे दिखायताँ या तथ्य अभास रूप में वापसी जो तबको अलग-अलग खेल कर कर है। इस तत्त्व में इस्लाम का रामलिन रचना और वेदभाग की रामप्रयोग के भी अत्यन्त उदाहरण है। विवेकानंद द्वारा धर्म प्रका प्रभाव से मुद्रण को प्रभावित करते हैं। इसका बदलता बदलते घटते दिखायत, वेद युग मूल दिखाय

उपरोक्तों के प्रति को प्रभावित तो करते ही है इस प्रक्रिया से दिखाय को नई दिखाय। भी मिलता है। दिखायतों के शब्दों में "मानव संबंधित विषय द्वितीय रूप से जीवन वृत्त के बदलते ही सौंदर्य के मा न भी बदलते है। 37 तौर-पर के मान से दिखायतों का तात्पर्य आभासित के प्रभाव। स्वाभीर विषय का भी आता। निकी रचना होती है। इस स्वाभाव के अनुप्रभु यही मान नही होती है। कभी कभी देता भी देती ने जाता है कि रचना के आत्महेतु मान के अनुसार दिखाय का संघटन न होने के कारण सब हुए होते हुए सब अर्थ ही नलिंगा की और बदलने-समगर है। आत: यह भी महत्त भूमण होता है कि रचना की मान के अनुसार
विलय में परिवर्तन हो। रचनाकार आभिम्युक्ति के लिए विन तत्त्वों का संयोग व दुनाय करता है उन्हें के आधार पर रचनाकार, स्त्रिया और बलमा तथा उनके उत्तरार्थों का तथा समाज के यूज करता है उदारता का पथ चलता है। दुनाय का संबंध न तो गतिशीलता से होता है और न कोई भूतिय जीवना से। वह म्यार्ड में परम्परा का प्रारंभ अन्वय होते हुए भी तात्क्षणिक जीवनता और तपासता से अण्वर्नित होता है। बाह्य दृष्टिकों से वह तम तात्क्षणिक अथवा प्रभुत्वीक तत्त्वों से सम्बन्ध होता है। पर ऐसा आभाषित होता है। उनमें यूज ताया स्त्रिया दृष्टि प्रदा ने तो सब्ब नहीं। इस तरह व्यतीन अपने ही तकनीकी विन्यास और भूवत की जिज्ञासा का विशेष्यण सभ्य पाना जाता है।

रचनाकार की यह दृष्टि आभाषित को नियंत्रित करके उसे तत्क्षण तत्त्व दृष्टि प्रदा करती है। यह अथवा चौठी से संबंध होने के कारण वह का के लाभ में सत्यावर्तक हिस्ट होती है। रचनाकार की आभाषित तत्त्वों का नियमन करने का है और यह उसी भए-संपत्ता को अण्वर्नित करती है यह दृष्टि तत्त्व आभिम्युक्ति की तत्क्षण व्यतीत करता है। इसमें दुनाय दृष्टि की प्रभावता वाई जाती है। इसीलिए वह विन्यासों के तत्क्षण व्यतीत होती है। निश्चित दृष्टि अथवा संधारण से प्रभाव होने वाले अभावित अभाव और अण्वर्नित होते हैं। यह दृष्टि उन्हें प्रभावित करने का काम करती है। इस प्रभावन से अन्त-व व्यय तत्त्व करता से का तरतुगा से अलग हो जाता है। ताप हो दुनाय में निश्चित व्यतीत का समाधिक होता है।
समो समदेव प्रागम ने स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा तथा तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा 

विज्ञाति इतिहास में स्पष्ट स्पष्ट तथा
होता है। यदि विज्ञानवर्ग में सर्वनामयक प्रतिमा तेज़ी से टकराने, उसके आध्यात्मिक करने की जितनी ही अभ्यास होती है वह उतनी ही ब्रेमण होती है। जैसे विज्ञान वर्ग सर्वनामयक मानसिकता को अध्ययन से अध्ययन आध्यात्मिक कर सकती है, तेज़ी से अध्ययन उन्नतिकर तेज़ी से अध्ययन द्वारा उत्पन्न कर सकती है। अर्थात, अंतर्निहित विज्ञान वर्ग में सहायता और पुराण उत्पन्न करने वाली होती है। ब्रेमण, जीवन, अर्थ-पूर्ण जीवन के संग से जल्दी विज्ञान कल्पना यहाँ पर महत्वपूर्ण श्रृंखला का निर्माण करती है। एक तरफ वहाँ पर यह विज्ञान वर्ग में क्लासिक स्व-तीन्द्र ज्ञान करती है, दूसरी तरफ वहाँ पर विज्ञानवर्ग के लिए अनौपचारिक शैली की भी तलाश करती है तथा निर्मिति का सहायता करती है। विज्ञान वर्ग और उसके स्पष्ट विधानों में संबंधन सर्व समस्या का होना आवश्यक होता है। दोनों का आपसी तात-मेल यदि ठीक नहीं होता तो बहुत तरीके द्वारा उत्पन्न हो जाते हैं जो विज्ञानवर्ग और उसकी शैली विधि को अन्त तक अथाहित करते रहते हैं, किसी परिपाटी स्वप्न रचना अपने आन्तर्गत वर्ग तक पहुँचाने पहुँचाने सम्प्रभुत्व को प्राप्त कर लेती है। एक बात और ध्यान दें विज्ञान वर्ग विज्ञानवर्ग के अनुसार अनौपचारिक प्रदान कर विज्ञान विधि उसकी गैरमाना में यात चाहें लगाती है वहाँ पर विज्ञान वर्ग भी गैरभी दर्शते, वह भी प्रकार तत्काल उसके तार्किक दृष्टि है।

वर्ग और लघु के आन्तरिक संबंधों को लेकर क्ला के अन्य वेत्ताओं की भौतिक तार्किकता में भी बहुत विपरीत विचार हुआ है। कोई विपरीतसाधारण वर्ग को ज्यादा
गहन्ता देती है तो कोई रूप को। कोई रूप को गौण दराती है तो कोई वर्ग को। लक्षण दृष्टिवे देखने पर तो रूप और वर्ग, वर्ग या रूप दोनों में देखा कोई नहीं देखा देता, लक्षणिक वे तो दोनों तत्त्व हैं, समान धर्म हैं,
एक दूरे के पूरक हैं। प्राचीन तात्त्विक-शास्त्री बुद्ध वर्मी के प्राचीन-शास्त्र से इस पर विचार करते हुए कहा है कि "तात्त्विक यो तक विचार और शब्द की कला है, वलं के अन्य रूप से "रूप" को दुलना में विज्ञान वर्ग द्वारा महत्वपूर्ण तत्त्व होती है। विज्ञान वर्ग और निर्वचन-प्रमाणों तरा या जीवनों से बुद्धी दृष्टि की पूर्णता का निर्माण तत्त्व होता है। विज्ञान वर्ग स्वयं ही एक निर्माण रूप धारण करने का प्रयास करती है। ऐसी देखती है एक निर्माण विज्ञान वर्ग ना उसी पूर्णता के अनुप्रयोग अन्य रूप होगा।38 इसलिए पूर्णता रपरट है रूप की गौण अलग दिशातिस्त
साताहित्य में वर्ग ही मूल होती है यह अलग अन्य स्वरूप स्वरूप की तत्त्व होती है। प्राचीन वर्ग के तरा अभिप्रौद्यता माध्यम और उसे घटना के तत्त्व का अध्याय यह भी नहीं मानना जाना परिभाषा वै वह गौण है। विज्ञान वर्ग का जो उद्देश्य होता है उसी के बहुत इस संख्या स्वायत्तता प्रकृति पर ही प्रभाव करती है। कहीं-कहीं विज्ञान-वर्ग, रूप-विज्ञान को भी प्रभावित करती है "उससे इस भाव की प्रेरणा से अलग कथन के दीन में वहृता आ जाती है।
ऐसी वृत्ता काश्य को पुरबिता के भीतर रहती है। उसका अनुभव भाव विज्ञान वाक्य की स्पष्टता नहीं है।39 साताहित्य: शुम्भ की इविष्ट में भी रूप विज्ञान की एकम अलग कोई तत्त्व-सार्वभौमका नहीं है। यह वर्ग विज्ञान उपरि विद्या
वर्ष का सहयोग है। इसका समन्वय एक तरफ बार्ता पर इदानित्रमक हैं वहाँ पर अन्योन्यार्पित भी। मार्क ह्योरर के इस विद्यान हो जो स्थिति से ताप इन्तर करते हैं। वे वस्त्र शिल्प की समन्वयात्मक रिक्षित को किसी प्रकार नहीं मानते। उनके दृष्टि में शिल्प ही वह है। मार्क ह्योरर के शब्दों में "शिल्प विद्या ही वह साधन है जो एक को अपने अनुभव का, जो वास्तव में विश्वव्यंग है, प्रयोग करने के लिए बाह्य करता है, त्योहारी शिल्प विद्या ही एक मात्र वह साधन है। किसी माध्यम से वह अपने विचार की खोज कर सकता है - जो बाह्य प्रज्ञाता और प्रतिष्ठा तार सकता है। और केवल इतना ही नहीं, वरन विचार वृत्त में अंतर्विन्दित अर्थ जो अभिव्यक्ति कर उसका मूल्यांकन भी कर सकता है।"[10] लोकोनरो धर्म का भी यही वर्तमान है। उनके दृष्टि में उपन्यास [क्ला] का फार्म उस द्वार तक विश्व प्रकाश है वि उसे अभाव में विश्व प्रकाश विद्या ही नहीं है। हल्लोनरो द्वारा उपन्यास के साधन में विद्या विश्व है शिल्प तब भी अधि कथा वधू शिल्प-विद्या के लिए महत्त्वपूर्ण बन गया है। देवे शिल्प विद्या के दृष्टि उपरोक्त दृष्टि अतिवादी होता है।

मूल मिलात यह वह नहीं है वि विश्व प्रकाश और शिल्पविद्या दोनों रचना के अनुबंध तथ्य है। विद्वान-प्रज्ञाता के दोरान दोनों की सम्बन्धिता होती है, दोनों के दूसरे से आंकोरित परिवर्तित होते हैं। इनका संदर्भ समन्वय ब्रैंक रचना और रचना की ब्रैंकता के लिए आवश्यक है।
सौन्दर्य और कला में बहुत निकट का सम्बन्ध रहा है, इसलिए भारतीय और पाश्चात्य दोनों सिद्धांतों के मध्य यह स्वयं चर्चा का विषय रहा है।

"सौन्दर्य" शब्द विद्वानों की भाववादक संख्या है। इसका निर्माण "संदर्भ" शब्द में भाषा क्षेत्र में "स्व" प्रदेश तथा ते हुआ है। हिन्दी में लाठित्य, सौंदर्य, बालित, तात्त्विक इत्यादि शब्द, सौन्दर्य के प्रमाणबाधी स्थ या प्रमाण होते हैं।

उर्दू में हुसैन और नवीनी में "संगणक" शब्द भी इसी क्षेत्र में प्रमाणित है। लेकिन सौन्दर्य के सम्बन्ध में जितने चर्चा-परिचय इसी होंगे, और जो निकटता हामी के अधिक उनमें गौरव नहीं दिखता। विभिन्न विद्वानों का इसी विषय में विभिन्न-विभिन्न अपना है। चूँकि ज्ञान के व्यक्तिगत मानों हैं और चूँकि लोकसंख्या मानते हैं लो चूँकि अलगाविक, उसी लेख के पक्ष की विवेक मानते हैं। इसी कारण विश्लेषण एवं सौन्दर्य के सम्बन्ध की देखरेख के लिए हमें प्रथम सौन्दर्य को स्पष्टत हर लेखा उपेक्षित होगा।

सौन्दर्य के संबंध में पेस्टो के विद्वान करते प्रवचन हुआ है कि "सौन्दर्य लक्षण विद्वान" विद्वान है, जिसका एक विचार यह होता है कि विभाजन। न यह ज्ञान होता है, न व्यक्ति, यह न खोज स्वयं सुन्दर है और न असुन्दर, न यह भाव में बन्दर है और न बुद्धी समय में सुन्दर है और न बुद्धी समय में कुछ, न यह सुन्दर है लेकिन न वह गुल्लक।

इस प्रकार आवश्यक उन विलोकनों का अवधारण तथा विनाश होता है और न ही परीक्षित होता है। पेस्टो का यह विचार विश्वासित नहीं है, न ही जीवन की मद्दत ही है। यह उनके व्यक्तिगत व्यक्तियों का ही प्रतीक्षण है।
इससे यह पता चलता है कि प्लेटो का विचार सौन्दर्य के प्रूढ़त विख्यातावादी हो रहा है। वह सौन्दर्य को अलौकिक और भावनात्मक मानता है। प्लाटो अपने धार्मिक और तीर्थ के समाज-सम्बन्ध को ही सौन्दर्य कहते हैं। उनके मातामाता उनके धार्मिक और तीर्थ के समाज-सम्बन्ध को सौन्दर्य ही लघु-विधान प्रदान करता है।

वे सौन्दर्य को सशस्त्रवादी सहभागिता मानते हैं। प्लाटो का भी मात्र सौन्दर्य के प्रूढ़त प्लेटो के समाज ही एक-पक्षीय है। इनकी ट्रांस में सौन्दर्य पूर्णत: भावना है, वर्णन नहीं। क्रूसिय जर्मन विद्वान हीरेल के मातामाता अक्षर की अभिव्यक्ति वा प्रयास सौन्दर्य सुन्दर है। इसका माध्यम अशा अनुकरण ही सुन्दर है। सौन्दर्य के प्रूढ़त हीरेल का विचार प्लेटो और प्लाटो के विचारों के व्यास तर्क-संगत है। हीरेल का सौन्दर्य न तो सशस्त्रम न है, न जीवन से परे ही पवित्र है। वह आदर्श की अभिव्यक्ति का प्रयास है। स्वी विद्वान बैरिस्को ने सौन्दर्य की व्यास जीवन के परिसर में की है। उनके मातामाता "सौन्दर्य तात्त्विक जीवन के अनुरप्त यथार्थ के लिए प्रूढ़ीत छिन्न है कि हमें आनन्द ही नहीं देता, प्रूढ़ीत छिन्न होने के प्रेरणा भी देता है। इसके मातामाता जीवन से परे सौन्दर्य की कोई दीर्घता नहीं है। जो नाट्यमय, दीर्घ और उसकी यथार्थता के जिन्दगी ही गहरे स्पर्श से संबंध होता है, तब हमारा ही सौन्दर्य प्रस्तुत होता है। प्रेमवन्द ने भी इसके से मिलते-जुलते विचार व्यक्ति सेक्स है। "जबल वार्तमान या हम-आधारी है, वह सौन्दर्य है, वही सत्य है, वही हृदय है। वह तत्त्व है परे जीवन की रक्षा होती है, जीवन का विवाह होता है, वहीं हुर्जु है। 92 प्रेमवन्द के इस विचार को देखने के भी पता चलता है कि सौन्दर्य कोई बड़ा या
व्यक्ति का जीवन नहीं है और न वह जिसे खोजने वाले आपसी ध्यान का ध्यान है जो जीवन से परे है। इसका आत्मोपासना स्वयं तीर्थ तस्वरुण प्रगति और जीवन से रहते हैं। वह इन्हीं पर आधारित है। इन दोनों के अभाव में सीन्द्र की व्याख्या और परिकल्पना करना तक न होता आदर्श है। बोलक उचित भी नहीं है। रामचंद्र शुक्लने इसको स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "जैसे धीरज मे पूर्व को पोछे बिरायक कोई स्वप्न नहीं है। जैसे ही सन्नद्ध करते से पूर्व में सीन्द्र कोई पद्ार्थ नहीं है।" 43। तात्त्वज्ञानी लाल खण्डे में "अस्ति अनुभूति, सृष्टि, कल्पना आदि जीवन आनंद को उत्पन्न करते वाले पद्म के लिए की सीन्द्र और सन्नद्ध को सन्नद्ध करते है।" 44।

इस प्रकार का देखा है कि सीन्द्र के समर्थ में दो प्रकार का विशार धारण क्षमित है। प्रथम भावावधी विद्यार्थियों, दूसरी वस्तुवादी विद्यार्थी यारा। भावावधी विद्यार्थी के गुणों में प्रेमदी, विद्वान, नागर, भरत धर्म और दूसरे गौरव का नाम लिया जा रहा है। ये विद्यार्थी सीन्द्र की व्याख्या का आत्मोपासना इंद्र में स्वप्न निरक्ष ज्ञान से करते हैं। इनके अनुसार, सीन्द्र जीवन काम से उपर की योजना है। वस्तुवादी विद्यार्थी में पेलिस्को, राजा, जीवन स्वप्न, प्रेमवाद, वास्तविक प्रताप दिव्यों का नाम लिया जा सकता है। ये सीन्द्र को तमाज सापेक्ष मानते है। इनके अनुसार सीन्द्र को कोई अन्य सत्ता नहीं है बल्कि जीवन-ज्ञान के ध्यान के बीच हो निरंजन है। "सीन्द्र का ब्रोत ज्ञात है। ब्रह्म के भोजन बो मरण वाले तत्स्यं, जो बीमार है, और जो अन्यों मात्र तत्स्यं इसके बाहर-सन्नद्ध-अनन्त को सत्ता नहीं है।" 45। जो जीवन और गरबाहिर है, उनके लिए सन्नद्ध प्रति में है, अन्याय-अव्याहत को फोर के
दोनों में हैं, भीमकृत्ति से निदान होने और क्षण में ही जीवन की सार्थे पूरी करने में हैं। वो बीतिवत और उदयिन हैं, उनके लिए दुनिया तथा है, धर्म को 
बीतने में है, आध्यात्मिक, अस्थायी और उद्यम की दृष्टि को व्यक्ति में है, धर्म 
और शारीरिक रूप से वापस वापस रही हैं। पुराण जीवन को बीड़कर करने वालों, उद्यम 
अन्याय, दुरायार भ्रमायार और वाले शरीर पर सिध्दाचार्य का मुखमत 
देखने वालों, दूसरे समाज में मानवता इत्यादि मानवीय पूर्वों को काम 
रखने वालों, कृतबित्तिक-वृत्तियों दुनिया गुप्तदुनिया बनाने वालों एवं अन्याय-अन्याय 
को इस्तेमाल करने वालों, धर्मकृत्तियों को चेतना करने वालों। जिन पुरुषिकर्त्वों की 
गति सत्यांत्यात्मा की है, वहीं दुनियाँ हैं, उन्हें मौन व्याप्त जाता 
है। विद्वेष की रचनात्मा ताहद भी तौन्वर की रचनात्मा सत्य तथा मंगल के 
सार्थकताएँ न होती हैं। वह सत्य निकला 9 समय का होता है क्योंकि भी 
उसे कर। अवर्त के लिए व्यक्ति जो मन भी लिया जाय, वो शारीरिक 
क्रम है 9 समय का होता है। वह उसी समय नहीं है। उसका अर्थ समय 
है तो हृदय है। 
संस्कृत कान्तिक के विपेक करना उपयोग नहीं है। सीन्धु व्यस्त सार्थक नहीं 
होता है अलगी रचनात्मक सार्थक सार्थक होती है। 

तौन्वर की जीवनान्तर्गत सवृष्ट गोर होता है। कोई भी भाव हमारे मन में 
से तो उत्पत्ति नहीं होता, आसा अधार भर्ते न करीं अधार होता है। 
भव मनुष्य में भी हो लिता है और पुरुषित में भी अश्वास्थ योगों के तपायमय में भी। 
परन्तु इन भावों का उद्यम मनुष्य के मन में ही होता है। यथाचर कह मूलत: 
अमृत की वर्ध है। तौन्वर के बाद नहीं होता। बाहरी सीन्धु तो सीन्धु
का इक पल्लू है। ऐसे क्रियात्मक सोन्दर्य का एक और प्रमुख अन्तर्क्ष पल्लू भी होता है जिसका निर्माण मानव तंबाकू के द्वारा एकतापूर्वक व्यापक और सार्थक व्यक्तित्व के आधार पर होता है। इसी के आधार पर व्यवहारिक दिगेरी “सोन्दर्यकर्म्य पूर्णा” और देशस्तरीय वाणीयो “सार्वजनिन नित्य रस्सा शाक्ति तत्त्व” कहते है।

सौन्दर्य के समक्ष में जो सबसे बड़ी भूमिका है यह यह रहे है वह यह निधन उसी पल्लू के सोन्दर्य प्राप्ति मानने मानते हैं, बोधनेवाले और यथार्थ वर्तमान रहती है या अन्य साथी है। दैनिक जीवन यह नहीं है। वातावरण की तीव्र शक्ति जिसके विवरण है। यह तो इतर “पाती मानस सोन्दर्यदृष्टिकोण” का क्रम है। सोन्दर्य पूर्व में हो होकर जो कारणों में भी। उसका अपना ही निरंतर सोन्दर्य है। उसी तुलनी के बिन्दु में दौर-दौर निरोध प्राप्तियों के इस तथा सुनिश्चित कोई एक सोन्दर्य दुख है तो वह वृद्धाश्चर्य की व्यापक अवस्था और विश्वास की उंचाई के साथ सहने वाले दुःख में कार्य अधिक सोन्दर्य है। इत्यादि का सोन्दर्य व्यापक के युग के सोन्दर्य से ज्योति अरुप्त है।

बारी दुःख की वन्धन है कि “जब तक साहित्य से वृद्ध है वहीं सोन्दर्य व्यवस्था का देश भी निर्देश नहीं है, यह मानवीय धारणे को समग्रता में अर्थात् प्राप्ति देरीकरण में है। 47 बारी दुःख का हाय क्रम रंगान्वयन भी अनुपयोगी नहीं है बीती औषधिय मूर्ति है, नयीन रुपक साहित्य की रचना करता है। यह दृष्टि और कुछ नहीं होती, जीवन की ही दुःखरूपी होती है। तब उसके साहित्य का सोन्दर्य जीवन तक के अंत से हो तक तक है 9 दिवस होते हैं जीवन निष्ठा का वितरण की व्यापक स्वर परिपूर्ण वितरण होगा वह उत्तम ही सोन्दर्यः दुःख मानी जानी चाहिए।
अब प्रसन यह है कि लेखक का दायित्व केवल तपाई यथार्थ रिकार्ड के ताय तमाम हो जाता है क्योंकि तामाम भी है जो हेक्टर कुछ मानता है जो तामाम होते हुए वह भी रिकार्ड हो और रिकार्ड होते हुए वह भी तामाम हो। क्योंकि लेखक लेखक की लेखन तत्त्व नहीं होनी चाहिए और लेखक नहीं चाहिए लेखन दोनों एक ही अवस्था में प्रकाशित कर लें। ताय ही उसमें इतना ताय लेखन पाठियों को उन्नय और विस्तार, दोनों को अलग कर दें। क्यों बीच की लेखन करने में तभी तमाम होगी वह वद-अर्थ दोनों में संगत हो, दोनों संदर्भित हों। वो लेखन इन तारी विवेकवत्ताओं से पूर्ण होगी वह अवश्य ही सूचनायों के तौरे प्रदान होगी।

क्षण प्रकार हमें बताते हैं रेख्त तौर और तात्विक के होने में पानिकृत

तमाम होते है, लेकिन यह तमाम केवल बाहरी नहीं है। उसका तमाम तीन लेख संबंध तीन लेख-पृष्ठ है। लेख-क्रम कहाँ से प्रिंट विवेक का कार्य आरम्भ होता है और वहाँ पर कुछ तमाम होता है, पहले होते हैं। ज्ञान भी कार्य आरम्भ होता है और धीरे-धीरे बिन्दू पर जाकर तमाम होता है। वह लेखक कहाँ बीवन-कन्ह के अवधारित विषय को लेखना का विषय बनाने की प्रेरणा प्रदान करता है वहाँ पर बीवन-कन्ह के विषय को गहराई से दृष्टिगोचर विषय के तात्विक भी प्रदान करता है।

उपर्युक्त विवेक के माध्यम पर हम कहते हैं रेख्त तौर लेखन का लेखना के तीन प्रदान करते हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि तौर- के शुल्कीयत का आर्थिक अर्थ है। वह बाल्परिवर्धक की प्रत्यक्षता की विध की
कौटि होता है क्योंकि वह तक कोई तदविद्यात्मक वैदिकत्व अनुपन्य दुर्बलता कर देता, तब तक क्षण कोई अर्थ नहीं होता। यदि कार्य रोन्द्वार की दुर्मिलापर होता है अर्थात् उन्होंने के काल्पनक प्रस्तावकर्म में तार्किकनीता अन्य पर रोन्द्वार पर्याप्त होता है। इत्र प्रकार रोन्द्वार बहते पर अंत्यस्थापित का तत्त्वाभिनव वह जिसी अन्तर्क्षेत्रित इवाई नी।

अन्तर्यापित के प्रथम प्रति

भाषा

भाषा का हमारे जीवन में अपील महत्व है। जब भी हम कहां से या कहां से प्रतिलिपि का आयान-प्रयान करते हैं, यदि जियं बिनें से अपने कर त्रस्तता प्रयान करता है। रवनाराम के लिए तो भाषा का और भी महत्व है। आप आदमी और रवनाराम में भाषा के तरार पर वैकल्प्य उत्तर होता है। जीवन-कल्पना की परिस्थितियों, जायते, विषयों, घटनाओं ते वर वैरियाल होते रहते हैं, स्थान, भाषा के भाव में न हम उनको रख पाते हैं और न स्तना भौरन्वा के तरार पर व्यक्त प्रति का पाते हैं। वास्तव में, भाषा ही योगा को स्तना भौरन्वा ते लंगे करती है। रवनाराम के लिए भाषा ही जांच नाता, जान तब तक है। जब के माध्यम ते यह अन्य मोक्ष स्थान प्रयान करता है। भाषा के भी माध्यम से यह अन्य अपार प्रमाणों को प्रमाण करता है। इस योगा वेदी नहीं होती।
बती रहे हम सम्बन्ध-मार्ग में देखो है । यह दृष्टिकोण तक ही यही अनुभव है तथा तक वचन उन्नति: किसी दूसरे वस्तु अत्यधिक स्थिति के तीना मजर होते है । ॥८॥ भाषा पर पवित्र करने वाले प्रदीपों में बहहूं का मानना है कि भाषा गान रहे भेद तात्त्व द्वारा रचित कार्य पवित्रों को अभिम्युक्त करना माना है । जब भाषा ज्ञानी कोई युक्तिका नहीं होती । किसी ज्ञानी पर भाषा की प्रविष्टाच्यांश भी उन तोरे ने ही है कि - भाषा भाषा की वरिष्ठा है या भाषा अभिम्युक्त उस दुसरे स्वर तात्त्व है । लेकिन यह गान ज्ञानी ही नहीं होती । भाषा ने तमन्त्र का ही तीनों अभिम्युक्तों ते है । जब वहाँ पर अभिम्युक्त रहे ज्ञान वृद्धि प्रदान करती है,जो हमें में अभिम्युक्त वृद्धि है, पहरा रचनाकार को प्राध्यापक के अन्त वाहन तक भी ना बाती है,इस रचनाकार को स्वयं भरभर चलन पौरोहित्य के तर्क को भी बातने में तहतात्त्व प्रदान करती है। रचनाकार जिन अभिम्युक्तं को व्याकरण, भाषा ज्ञानी के गान की लहर में ही तरी दौड़ते है। ज्ञान गान वाचन जो दीर्घकाल के पूर्व ही, ज्ञान तीव्रता से मिली भाषा में उपलब्ध हुआ देना। पुरातन है कि प्रारम्भ-में भाषा का बचन तात्त्व वृद्धि की भाषा में उत्साह हुआ देना । वहाँ है कि ज्ञान-सम्पन्न की भाषा का लहर वर्ग है! तात्व ही यात्रा रचनाकार की भाषा भाषा ज्ञान तीव्र से भाषा ज्ञान तीव्रता होती है। उसकी तीव्रता की भाषा ज्ञान होती है तो उसके तीव्रता की भाषा जो कहा है भाषा है । ज्ञान वाचन अभिम्युक्तरी की भाषा वर्ग है । रचना है कि ज्ञान-सम्पन्न शीतला का तात्त्व है। भाषा के मध्यम ते की तीव्रता है, अभिम्युक्त करता है, तीव्रता होता है और यहाँ सम्पन्न का क्षण में बदलता है। भाषा वर्ग अभिम्युक्तता तत्त्व का प्रदान करता है तत्त्वपरान्त पाठक भाषा के मध्यम से रचना से पैरिष्टत होता है।
भाषा केवल जदना ही नहीं करती वह अवधूत को आवश्यकता तराती ही है। यही कारण है किंतु यह भी रहनागर की भाषा दुरब्रह्मिता तमपन रही है, तामरवर्यान रही है वह दुन दातिहत के अंत में तमपन रहा है स्वयं उस रहनागर विद्याय की रचना प्रभावी तारीख इसी है। इससे यह कहना चाहिए कि भाषा तारीख का केवल एक साधारण उपकरण मात्र है जोलजी सारथी केवल बालाक है के अनेकों ही नहीं अति-हिंदी है। भाषा कीता (सारथित्यक दुरब्रह्मिता) की सम्पूर्ण प्रकृति का अपील अंतर्वत है। काव्यार्थ के लिए भाषा ही रहती है, जितनी ही रहती रहती है उजना ही अर्थ स्वयं अल्पक अधिक गढ़ता है। 49 टी0 सा होल्याट का ब्यास है पौर्णमि परिवर्तित है, क्रीः से उन्होंने रौला है कि कोय का प्रत्यक्ष उत्तर दातिहत भाषा के प्रति है, सोक के प्रति उनकी दिल्लीत्वांशी बहुत छोट मुख्य है।

भाषा और दुन दोनों में घोषित उन्नतिव्यय होता है। ऐसा भी कहा जाता है कि भाषा दुन की कोटि को प्रवीणता करती है। कोई भी दुन भाषा में भाषा के द्वारा ही दुरव्यात होता है। भाषा के माध्यम से जिन्हीं समय के विश्वास, भाषा-वर्ण, रहन-सहन, जीवन-विश्व को आत्मनी है वहां जन उसे हि-प्रत्यक्ष का गठन उसमें गहे हुए शब्द, उन शब्दों की ध्वनियाँ, उनका तारस्प शुरु संगठन, तब ज्ञ पर दुन का प्रभाव पहुँचा है।

भाषा-प्रवीणत का शृंखला ते इस प्रकृति के माध्यम से भाषा निरंतर परिवर्तित होती रहती है यथा भाषा भाषा व्यवस्था में विकसित होती रहती है। रूपया में अनेक तस्करियों हैं। प्रत्येक का अन्या-अन्या अंतल स्तर्य संगठन व्यक्ति
फिस्म है। यही कारण है कि भाषा के उपरी बिंदु को कामिक्य करने पर भी परिभाषा संस्कृतियों की बारीक भाषाओं में एक तात्त्विक विकल्प है। तबके प्रयोग द्वारा निर्माण में भी एक स्पष्ट नहीं प्रदर्शित है। संस्कृतियाँ वर्तमान पर एक तरफ भाषा को प्रभावित करती हैं, जहाँ भाषा की अनन्त प्रमाण संस्कृतियों पर छापती है। यही कारण है कि जब कोई बन-साधन रचीतो दूसरी भाषा के तम्बई में जाता है तो केवल जहाँ गरमभाषा ही प्रभावित नहीं होती बैंक बीच का प्रत्येक अनन्त प्रभावित होता है। आदर-विद्यार, रशन-सहन, जहाँ तक रचीतो निर्माण को बिज्ञान पर भी प्रभाव पड़ता है। क्यों कि, जहाँ भाषा संस्कृत निर्माण के तम्बई में चाहिए होती है, जहाँ संस्कृत भी भाषा-निर्माण में कारगर शुभ्यिता अवश्य करती है।

भाषा दो स्तर पर तत्पर गौरवीत होती है, प्राम्य बोलचाल के स्तर पर और द्वितीय तारह्य के स्तर पर। इन दोनों में गुलाम; उन्मत नहीं होता क्यों है कि तारह्य भाषा का व्यूह भी बन-बीवन और हमारी भाषा ही होती है। तारह्य का आधार बन-बीवन, जहाँ समलया तथा बन-प्रौतिवन बदलती हई पहुँचती है। तारह्यकर इन्हें अपने तारह्य में पिच्छन करता है तथा वह बेच भी बाद के लिए ही होता है। इस रूपस्त में यह अपनी विभागीन बन बाटी है कि वह बन-बाहु तुले अवध हूँ और उसी की भाषा को अनारें, किन्तू लक्ष्यकर हूँ दुन का ध्यान भी रक्षा पड़ता है। यदि अब का तारह्यकर बृहत कालीन अथवा कालिवाद के समय के पत्तन-दुन या पौर्ण के मध्यम से अब के दुन को उभारचाय प्रशासन करना पड़ता है तो उसके अपनी भाषा को तरकारित दुन भाषा के तन्द्रिक में वह प्रभाव रूप देना पड़ता है। इस प्रकार रशनकार न
अपने वर्तमान के भाषा-बोध से कर सकता है और न पूर्वपर्वती पुस्तकें की भाषा परम्परा से । परन्तु: यही पुनरीति श्रीमथकार्य के मुख्य पुनरीति बनकर प्रकट होती है ।

तारिक्ष-भाषा बोलनार की भाषा की ही प्रकटत ह्य होती है ।

बब कोई बोली इसी की प्रकटत हो जाती है यदि उन वर्ग का व्यापक समायोग निर्माण करके लगता है, यह सुबङ्गात्मक तारिक्ष का माधुर्यबन्धन लगता है और तारिक्ष भाषा के तथापि निर्माण के निर्माण हो जाती है । यही तारिक्ष के भाषा वश्य द्वीप रेखा का माधुर्य बनाता है । यदि ध्यान दिया जाय तो इन वर्गों में माधुर्य के रूप में कुछ ही भाषा का प्रयोग करते हुए ही राज्यार जो यह वश्य पद की बोध-स्थायत के हिसाब स्थायत भाषा की प्रकटत में निर्माण उन्नत रहता पड़ता है ।

यह उन्नत प्राय: भाषा की बुनाई हो भी प्रभावीत करता है ।

गय प्र० ध्यान: वन्न की भाषा है, अत: उसके कारण अधिक अर्थक होता है । गय: भाषा का यह: यह शब्द अपने अर्थ के प्रवृत्त स्थाय के तार्किक स्वतंत्रता के होता है । अत: और यह अर्थक नहीं की जा सकती । गय: भाषा में दुध-विषयता तथा वाक्यात्मक का संयोजन मिलता है । इसमें राज्यार को भाषा के तार्किक उत्तमता के बनती बाल्क्य नहीं करनी पड़ती जितनी रख कौकला में । गय भाषा में बिम्बात्मक प्रतिकार्यता की भी यह निर्माण कहती है, और कौकला में ।

इसमें राज्यार ने-इसे शब्दों के माधुर्य से अपनी अनुवर्तिते, विन्तन व य्यन को श्रीमथकार्य प्रयोग करता जाता है । ने-इसे शब्द और उनके अर्थ के में निर्माणता होने के कारण यह गय पाठक के लिए तहस घायल होता है, तेज बोध बोध की भाषा की रचना तत्त्व के नहीं है । कौकला की भाषा कपाल का वास्तव बनना को वास्तव बनना सत्ता होती है । इसमें "शब्द" की तार्क अर्थ प्रकट को प्रयोग में
न ताकर उसके मात्र प्रतिकार्य को गुर्जर रखा जाता है। इस की भाषा में गद का भाषा की तरह कायम, निरिक्षित न तोकर उन्मुक्तता से बलातः होता है। पूरी बात, वहाँ में पताका शब्दों की परमार्थिता के कारण भई बंधा ता रहती है, वर्तमान प्रमुख शब्दों का अर्थ तिर जाने के कारण उन्मुक्त होता है। कौतुक की भाषा- यह भाषा की तरह अंगूरी पक्कर पन-पन की रचना का कर्म करता है, जिसके आधार पर तत्त्व ने मन में बिन्दूओं के निम्नांक होता है और वह उस परीक्षणीय की कल्पना करता है फिसले लवण का तत्त्व प्रकट किया गया है। कौतुक की शब्दों को कौतुकीय गुण गुण करता है उन्हें तीथो-तीथो ही कौतुक में ग्रहण नहीं करता, बल्कि यह शब्दों को तर्क प्रयास अन्त अनुप्रयोग के रास्यिएक द्वारे में डालता है। वह वे पूरी तरह ढूंढ जाते हैं, जमें परम्परागत रूढ़ अर्थ को अजमो करते हैं, तब वह उन्हें अर्थ रचना-विश्लेषण का अंग बनाकर एक पिछलेस्त्री, देता है। कौतुक में शब्द भाषा-पित्रों के तात जुड़े होते हैं तथा अन्य उनके तात रक भ्रात पूरा परीक्षण भी कौतुक होता है। क्यों तो यह रिकत्र प्रकृत शब्द के स्थान पर उसका पर्याय रख रखा गया नाप तो यह तद्देश अशुभ ही होता है। कौतुक की भाषा में ही तत्त्व प्रक्रमण के नहीं होती। उस की भाषा व्याख्यातमक होती है। क्योंकि भाषा में तत्त्व अर्थ और तत्त्व में निरीक्ष विश्लेषण अर्थ के समीक्षण के जोड़े श्रृंगार रूप बात हैं। फिर इक तहरे कोई भी व्यक्ति उस काज्य में रित्वेश तीथों के व्यवहार ख्यात में गुर्जर कर तकर। 55 कौतुक की भाषा में लक्षण, व्यवहार, पुरुष तत्त्वापन युगों की आक्षणक दोही है क्योंकि इनमें भाषा की गौंत बदली है। भारतीय काव्यात्मक सम्मत, उपनिषदि, वणन, भाषा, आनन्दकारण आदि
ध्यान, प्रवर्तन तथा शास्त्रकोशिकाओं के नाम ते फिर छाया-कार्यत, उदात्तता
व्यंग्य की पर्वत की है यह भाषा-सौंदर्य-वाक्यार्थ का ही व्यापार है। इन्हें
और भीज ने स्पष्ट रूप से काल्याणा के किरदार धूला को अवन्तित ब्रह्म प्रयोग है
है। इनका प्रमाण: ध्यान तिक हिंदू तत्त्व भाषा की जीवन भाषाभाषाओं में ग्रहण
होने पर शास्त्र में सूचीबद्ध किया जा तकता है।

भाषा की एक गतिःप्रवृत्ति है परिवर्तकोसरीत्ता भाषा में परिवर्तन की
प्रवृत्ति तथापि ब्रह्म होती रहती है। ज्ञान कायम यह देखा है कि शब्द का बदलाव
के तत्व तबू जीवन में भी बदलाव आता जाता है। जीवन में बदलाव ते जीवन
की आपत्तियाँ, परिवर्तनीयताओं समय से समय में बदलाव आता है। भाषा
के एक बदलाव में जो तरंग, ग्रहण ला ते भाषा ले ते है ते है। - - - और
भाषा तम्म लक्षण का प्रवाह है, [21] सामाजिक परिवर्तन, [33] आर्थिक लक्षण और
[41] विश्व ध्रुवीकरण प्रकृति उद्घाटन करने वाली परिवर्तनीय घटनाओं ! इसके प्रभाव
ते युगलक न त्या तः तारों आता है। बदले हुए युग वीर्य को पुरानी भाषा
को प्रवृत्ति प्राप्त पाती, तात्विक ही कोई दृष्टि पर ग्रहण होते होते रहने के कारण उनकी
नहीं आती शास्त्रोत्तम भी कोई होती है, क्योंकि शास्त्र ऊष्म-उष्म हो जाते हैं।
इसलिए भी तम्म समय में भाषा में परिवर्तन होता रहता है। लेकिन भाषा
में परिवर्तन जीवन के जन्म परिवर्तनों के समान नहीं होता, बल्कि पूर्व परिवर्त
भाषा की कोई ते ही नई भाषा का जन्म होता है। ऐसे समय में जब कोई
भाषा तकनी-शृंखला हो जाती है तो रचनाओं को दोहरे दायित्व का निर्वाच

करते हुए अत्यधिक परिस्रम करना पडता है। भाषा-निम्नांक के अभ्यास में अद्वैत रचनाकार को परम्परा से प्राप्त तार्कित्व प्रवाहित की जान-बीन करनी पडती है, यद्यपि उसे अपने सर्वसाधारण भी पता लगाना पडता है। दिन-प्रतिदिन कुले हुए परिप्रेक्ष्य प्राप्त के जान-निम्नांक के क्षेत्र भी इसमें उसके सहायक तार्कित्व होते हैं। दूसरी ओर लोक भीत्र तो उसके लिए मुद्दामार ही तार्कित्व होता है, क्योंकि लोक भीत्र में आत्मविश्वास मुख्य गरे उन्हें संप्रभु शब्दों, एवं अद्वैत प्रेषण, व्याख्याताओं का निम्नांक सैलैंड होता रहता है। लोक की अबाकी ल धारा से गाथा भाषा के बुझने पर उसमें नयी प्रारम्भ का संचार होता है। लोक व्याख्याकी सीमायी तत्त्वों द्वीपी धरती और उसके भीतर आत्मा अवधि सहजता शिक्षा गमनते हुए शब्दों को जनाने उन्के चिन्ताओं से जनाने से अर्थ की योजना दौड़ी देता है। 56 उसे उसी तल्लुक के परिप्रेक्ष्य प्राप्त का आर्थिक संबंध साथ ही को हुआ विवेचन, प्रतीकात्मक, उपाय, अनुमानित उल्लस बुद्धि से समान गमनते रहते हैं। इसलिए रचनाकार इसकी शाक-सार को पहचान कर इन्हें वहाँ ते उठाकर कायम भाषा में प्रीतिहित कर भाषा की शिक्षा में निरंतर अभिमुद्धर करते रहते हैं। लोक भाषा में कभी आत्मा संबंधी स्थानों पर विवेचना को देखकर ही शैलदृष्टि ने लिखा है कि "गाथा के क्षेत्र में प्रतीक व्याख्या लोक भाषा की ओर प्रस्तुत विकल्प के लिए थोड़ी छुआ है और वह भाषा ही प्राइंस। 57 काय तार्कित्व यह है कि रचनात्मक भाषा अर्थतः कायमाध्यम की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण भूमिका रोल क्षेत्र है। इसलिए यह रहने पर वह आर्यावत्व वही रहेगी।

भीत्रता की भाषा अर्थतः कायमाध्यम की शब्द योजना

विवेचनात्मक प्रेषण 58 का बहुत महत्त्व है। बिना उपयोगशील शब्द योजना
के काव्यबाहा के तात्त्वक और प्रमाण में कही जाती है। इससे काव्यबाहा में ल्याव्तता ल्याव्तता से तात्त्वक फिल्मा पिटा न होना। उपयुक्तता उपत्यक, मनोभाव, प्रयोजन-प्रहीता और प्रयोजन पिक्स अभिक्ष्यात्मक का समेकिता होता है। रचना का शब्द योजना में विस्तार ही तत्काल बरतेगा उतने ही अस्वीकृतिता भाषा होगी। इससे न तो उसकी काव्यबाहा में नकल करने की प्रवृत्ति, पैतन परती होगी। अनुयुक्तता अर्थशास्त्री काव्यबाहा सर्वनाकार के समय रचनाकार को जीत-परीक्षता के मोह और अत्यदुर्दार प्रवृत्ति दोनों मार्गों से बनते हुए मध्यम मार्ग 59 का अनुसरण करना पासीर।

फैलदी-फैलारे।

फैलदी अधिक का शब्द है, फिल्मा उपरित ग्रीक शब्द कैमिटरा ते हई है। ज्ञान अर्थ है अवरूप या अधिक जो द्वार बनाना अर्थकाल्पनिक या रचना ड्रेस को विनियमक रचना देने की तात्त्वक 50 कहना के तात्त्वक यह फिल्मा में विभिन्न का विपरीतता महत्त्व होता है। रचनाकार अनुकूलता तथा अपूर्वत तत्त्व दोनों की कथना ते अपूर्वत दो विभिन्न की रचना करता है। इन्हँं के माध्यम से हम पीढ़ी का दर्जन करते है। हिंदी में जो अर्थ में रचना-प्रथा, रचना-प्रघटनष्टादि शब्दों की प्रयोग होता है। लेकिन ट्रेंटी की और भ्रमण की रूपमा विवादित शब्दों का प्रयोग होता है। इन्हँं के लिए नाज़, अर्थ और कामयाब के प्रयोग के समान फिल्मा के लिए फैलदी कामयाब व्यवहार व्यवस्था प्रवृत्ति है। यह तात्त्वक भी है व्यापारिक फिल्मा अर्थ का मान फिल्मा शब्द से होता है। उसी अर्थ की पृथक पत्र फैलदी शब्द से भी होती है। फिल्मा में विभिन्न और प्रतिक वा संयोजन होता है। ये बिभिन्न
और प्रतीत जीवन के विभिन्न अनुभव कठिनाओं के अरौं अभ्यायात तो होते हैं।

विभिन्न कारणों, अवस्थाओं, विवाह घातकों के वाक्य होने के बावजूद सर्वकालिक
जीवन इतने दुल्हे तर्कालंकार के साथ एक दूसरे से बोले रहता है जैसे वे सम्पूर्णता के पर्याय बन जाते हैं। दिखाएँ आप वर्तमान विश्वव्यापी फ़िल्मों के पहले ही से, 
फ़िल्मों की प्रतीक्षा करने हेतु कहा गया है कि "फ़िल्मों की प्रतीक्षा में है, भारतीय साहित्य के नियमों की तीमा दूर
भारतीय साहित्य के नियमों की तीमा न होता है। पुढ़ तथा मानव-जीवन का अंतर मिल जाता है, मनुष्य के स्वभाव की आधार विशेष दिल वां जाता है और कल्पना की सरल साहित्यकार कल्पनक मूल्यों को
अव्ययित कर दे रहे हैं। ** विभाजन स्वर्ण अर्थात विभाजन स्वर्ण अर्थात
कार्य कैसे की तीमा नहीं होता है। उनमें आप के संकायरत या परिवर्तन
िति ति से अलग बुझ प्रतिहारित तथ्य हो सकते हैं किन्तु आई वह वह वार्ता पर आधारित है तो वह कैसे का मौर्या गिना जा सकता है। अर्थात उसमें सैता धार्मिक
प्रतीक्षा है जो कैसे के निर्मित काल में स्वीकार था या वह वह स्वीकार्य तत्त्वों
से समायोजित है जो उदयानांम में विभाजन के निर्माण के लिए वाले हैं तो वह
कैसे की तीमा नहीं था।

फ़िल्मों के माध्यम से सर्वकालिक कथा की संरचना करता है वह मानवी ही
होती है। मानव की स्नेह उनके जीवन स्वर्ण दूर्घटनों के ज्ञान के लिए प्रार्थना
करदेग उन्हें जीवन का भी दर्शाता तत्त्व के लिए नीति का विद्युत प्रदान करने हेतु
इसमें परिस्थितियों का भी विधान है। ये परिस्थिति अर्थात् तत्त्व तक स्वीकार लेते हैं। इसमें तो इस परिस्थितियों के प्रतिक होते हैं तो इस रचनाकार के मन्त्रण के। ये परिस्थिति समय समय पर अपनी अपनी परिस्थिति जन्तु प्रतिष्ठा को प्रभावित करते पड़ते हैं। इन प्रतिष्ठाओं से बढ़ते ही इसकी सीमाता समाप्त होती है यहाँ पर इसमें नाटकों का समाप्त किया होता है।

केंद्रीय का जितना संबंध पर्याय कमटे है, उतना ही मनोविकाश स्वरुप है। प्रायः के मतालग कार मानव की अनुभव हथर्ष ही इसकी प्रेरक शक्तियाँ है।

इसलिए इन्हें प्रियदर्शन का पर्याय माना है। उन्नी का अनुभव मानव मन प्रतिरोध का पुत्र है। उसके मन में अनेकथेक एकी तालमाला कमाऊँ हैं, जिनके मुक्त समाजिक, प्रीतविधत, दवारों, आर्थिक, कौन्सिलिङ्ग, समय को प्रीतविधत अन्य रिश्ताओं के कारण सकलिस्थत नहीं कर पाता, लक्ष्यवत् यह इसके दवारों में अपनी पिलाए रहता है। इन दवारों से इस्तिमाल पाने के लिए ही यह केंद्रीय की तस्वीर अनुभव होता है। प्रायः का यह मत अनुमित नहीं है, तवीरिक इसमें रचनाकार, मन की प्रतिष्ठा अवधि का, अनुभव जीवन समाजों का इसका रिश्ते की जीवन सिद्धियों का प्रेरण करता है ।

केंद्रीय के निर्भर में कल्पना की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जितनी स्त्रियाँ कल्पना केंद्रीय में रत्नी हैं उतनी अन्य रत्नी की शिल्प तत्व में नहीं।

इसमें कल्पना कई स्तर पर कार्य करती है। पूर्वत: यह जीवन अत्यन्त अच्छी की बोली गयी अवधिकाल, उसकी पीड़ा को तात्कालिक प्रदान करती है, दूसरे यह अर्थ को सत्य को लालामों में सहायता प्रदान करती है, तीसरे केंद्रीय के रिधि के अनुसार जीवन के समानांतर एक तरह-तरह क्षात्रिय प्रतिष्ठान का
रिमांच करती है। यही क्योंकि विधायको के निमित्र के ठीकता का यून-क्ली रिमांच रहता है, जिसका साधर्मक वाण अन्य विधायन विन्ध, संकेतों और प्रतीकों के सहारे करता है।

फैसले के विषय और पूर्तिकी का प्रभाव नहीं होता। बाह्य स्तर पर यहं ये प्रकट को उसके अनुमोद और उसके द्वारा निर्णय रहे समय के तामान्तर एक आधुनिक कारोबार और रत्न-क्षेत्र से भरी हुई जिन्दगी का पर्यावरण करते हुए हैं। वहीं पर जिन्दगी की तलहटी में कोई-किसी सड़क पर, टूटे रिहाय्स और टूटे रिसर्च्ली तक पहुँचने में भी सहायता करते हैं।

फांतासी में इन विम्बों और पूर्तिकों के निमित्त और उपयोग में नेरिटिक्लेनिक, देश-प्रदेश, अर्थित-आर्थिक, परिवार व राज्य व परिवार विदेशों की कोई प्रश्नतम नहीं होता।

फांतासी में उन्मत तथ्य-स्वरूपों की अनेक भाषा की विशिष्ट रिसर्च होती है। फैसले तक जो शब्द तारीख होना अति आवश्यक है। रवनाकार जब फैसले को शब्द-दीर्घ में उतारने लगता है तो उसके समय कई शब्दावली के पैदा होती है, जैसे फैसले के लिए आवश्यक भाव-वर्ण नहीं हैं। प्रत्येक शब्द में तालमेल न वैदिक या शब्द का अर्थ को प्राप्त करने में आर्थिक होना अथवा भाषा के अवृज्ञ घनत्वों का युग भाषा में न होना। इस रिसर्च में फैसलाओं का माना तेज़ होता है। इस दौरान यह आवश्यकता जताता कि फैसले में कॉट-पार्ट करता है कभी छोटी में नहीं अर्थ होता है, कभी भाषा की नई संस्कृति की और जीवन में होता है। कभी दूसरी भाषा से शब्द को लेकर अर्थ की संगति वैदिक होता है। इस प्रकार फैसले संस्कृति और भाषा दोनों में धारित संबंध है।
भाषा की स्तवत्ता, अर्थक्षमता, अर्थवलता पर ही केंद्री तक स्पष्टता निर्भर करती है। इसमें तन्त्र के अनुसार भाषा के विभिन्न स्पष्ट मिलते हैं। ज्ञान प्रदान अनेक होने के कारण इसके मनोवैज्ञानिक, जैविक, सामाजिक, सांस्कृतिक रूपों सम्बन्धी, पौराणिक, सांस्कृतिक इत्यादि सभी प्रकार की शब्दावलियों के प्रयोग का सुधूर उपलब्ध होता है। व्याकरण केंद्री जीवन-कला के यथार्थ की अभिव्यक्ति करने वाले सहज माध्यम के तौर पर स्वीकृति हो चुकी है, इसलिए केंद्री की भाषा में मर्म-मेडों कृप्ति व्याग्यार्थकता, पैनापन, जैसे-जैसे, तटीकता, फिर भार्यार्थकता आदि सुणों का होना आवश्यक है।

केंद्री के तो पढ़ होते हैं -- विभागपत्र स्वभाव पढ़। विभाग पढ़ केंद्री की भीतरी वर्तमान होती है, जिसमें जीवन गत यथार्थ अनुसूचित होता है। यदि यथार्थ प्रविश्य स्पष्ट में नहीं रहता है जबकी उपस्थित तार-स्वतंत्र सुध्य स्पष्ट में ही रहती है। भाषाकृति में केंद्री सत्तान्वित विवाह होते हैं, जो ग्रामीण समस्त विवाह के तौर पर रूप मानने रहते हैं, जिन का निर्माण सर्वश्रेष्ठ भवन के माध्यम से करता है। परन्तु इन दोनों में अलगाव नहीं होता, यदि दोनों एकदेश होते हैं। केंद्री के तिक कारण यह भी प्रपातित है राज वह भी वही होती है तथा उसका उप्र दृष्टान्त होता है। है। लेकिन यह उसका तार्किकता नहीं है।

उसके विश्वास में सैटी अन्त गार्थ वन तेना ठीक नहीं है। यह बात तो रचनात्मक के उपर निर्भर करती है कि वह केंद्री का जैसे संयोग करता है उसका रिश संस्थान में उपयोग करता है वह दृष्टान्त भी हो सकती है और न ही ब्रह्म। अधिक का मुख्य उदयरूप है, केंद्री के यथार्थ को बिना स्वाय-दृष्टि के आभासित करना। सैटी दिशा में कोई आध्यात्मिक तक पहुँचते - पहुँचते
तालम्या ग्रहण हो जाती है स्वयं इत्यादि प्रकार समाप्त होती है राक यम तोपने के लिए मबुढ़ हो जाते है। केवल भी आधुनिक व्याख्यातया दृष्टि की व्याख्यातया का का एक घटक है। उसका अन्त विशालरूपक उपयोग होगा। इसके आध्यात्म ते तर्क और गहराई के साथ उन्हें इस वर्तमान प्रकट-स्वाद्या पर कार्य वाले में तपस्वी होता है।

केवल कोई नया शैल्पिक घटक नहीं है। इसका उपयोग स्वयं पुस्तार प्रव्रतिन भारतीय और पारंपत्रत कीनें तारिखयों में मिलता है। हाँ, इसके उपयोग में अंतर बहर आया है। इसके पहले इसका उपयोग व्यावहारिक को जीवन के तर्क से दूर रहने में, उन्होंने तीसरें लोग में पढ़ावने के लिए रिहा जाता था यहीं पर आज इसका उपयोग व्यावहारिक को उसके जीवन के कद्दू और तीसरे तर्कों से परीक्षित करने, उसके दृष्टा मानस को झड़ोरतों तथा जीवन की भवनकता से लड़ने के लिए प्रेरणा और सामर्थ्य प्रदान करने के लिए रिहा जा रहा है। यह लघुसंग का देना अनावश्यक नहीं होगा कि पारंपत्रत तारिखय में नैतिक का रिहातन विषयक ते विवेकन मिलता है भारतीय तारिखय में नहीं। पारंपत्रत तारिखय विशेषतयों में उनी रोमांचित विश्लेष की संज्ञा से अभिविधक रिहा है। उनके माता-जनार जलमना पर आधारित होने के कारण वह विषय व्यावहारिक के ठीक विपरीत है। इसका विषय की व्याख्यातया का प्रश्न करना कठिन ही नहीं बोलक आम्ही है। लेकिन यह तर्क और सोप आदि इतनी ही अर्जित हो गया है विज्ञान राक पद्मावत को देवता मानना। आज भारतवादी और व्याख्यातया कट्टरियों में विश्लेष को आबद करने की कड़ाता नहीं है, लघुसंग स्थापन है जीवन के व्यावहारि को अभिविधक करने के लिए उजागर करने का। केवल इस वांछों पर रख्म बही उतरी है।
भारतीय ताहिर्य में इसका कल्पना में ही पूर्णता समाधित कर लिया गया है। ऐसा शायद इससे किया गया है क्योंकि फेस्टिवो की रीढ़ कल्पना ही है। कल्पना के दारा ही यह पालित-परिवर्तित होती है तथा सीवार कल्पना के डाय पैरों के ही ही जीवन की दुनिया करने में सक्षम हो पाता है। किन्तु आधुनिक भारतीय ताहिर्य के अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि फूलाती सीतापरिवर्तित का ऐसा रूपांतर घटना भी है जो अपना ही ताहिर्य बनाता रहता है। इसी दारा जीवन को जितनी गहराई और विविधता प्रचलित रूप में प्रकट किया जा सकता है वैसा जिसी अन्य के दारा नहीं।

किन्तु, यह इस सर्जक के लिए तन सम्बन्ध माध्यम है, जिसे उसके लिए गौरी दुनौनी भी। कारण यह कि फेस्टिवो सर्जक से अलग गहन साधना की गांठ करती है। इसमें आध्यात्मिक के लिए बोधि भी अच्छा नहीं रहता। जिसकी कल्पना जितनी अर्थता होगी, जो दारों की रंग-सोने से आत्मियता पूर्वक बुद्धि होगा, जिसके बिंदमित्व और प्रसिद्धिक-प्रशस्त में दादाड़ी प्रचट होगी, जो कम-प्रतिभेंघ होने वाले सामाजिक-राजनीतिक, आर्थिक बदलाव के प्रति तरीके होगा, जिसको सामाजिक सत्य की खत्मात्त के परम्परा पर्यावरण की आधारार्थ जन्मकारी होगी, जिसमें बीने की पलक तालसा होगी, जो कीन के तत्त्व रूप उद्देश्य को श्रृंखलावी होगा, जिसमें मानव के गहरे में पैने की तामधुरी होगी जिसे ब्रह्म रूप अर्थात केंद्रों का अनुकरण हो तकता है।

कल्पना

कल्पना और कल्पना दोनों में बड़ा ही निम्न तमन्य है। कल्पना के दारा की कल्पना में नवीनता, नौलिका और आर्थिक पैदा होता है। यही कारण
है कि जिस कलाकार की कल्पना शक्ति जितनी ही बाहुल्य होती है उसकी क्रिया उतनी ही गौरव-प्राप्ति होती है। इसी के माध्यम से संगीत भाषा में नयी लय-तानों, राग-राजसीनाओं का निर्माण करते हैं, पुर्वांकुर द्वारा में नये प्रशिक्षक ढालता है, वास्तविक नयी भवनों का निर्माण करता है और दूर-दूर पितामह अपनी विनम्रता में नई आभासिकता शक्ति पैदा करता है यह रचनाकार अपनी रचना में नई भावता उत्पन्न करता है। यह कल्पना जहाँ पर्याप्त, तथ्य स्वयं यथार्थीयों को देखने की नई रचनात्मक प्रदान करती है, वहीं उसका प्रभावी होने से आभासिकता प्रदान करने का मार्ग भी प्रभावित करती है। अन्य साहित्य की अपेक्षा कल्पना का मायावाद भागीदारी होती है, कथाओं में तथ्य और सत्य को हृदय-हँस-हँस आभासित तथापि नहीं प्रदान की जाती, बल्कि रचनाकार अकेले नवीन सौंपें दासकर व्यवस्था तो करता है।

कल्पना हाल का व्यापारित प्रकार अर्थ है, बृहत्तर करना। इसका रचनात्मक संबंध अनेक नामों में "अन" और "आ" प्रत्यय के लगने से हुआ है। अधिकांश अनेकों शब्द अनेक समानार्थी हैं। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार पूर्व अनुवादकों की पुस्तकों में पूर्व की अनुवाद उत्पन्न रखने की और पद्यांकांकों की कल्पना करते हैं। यह परिभाषा कल्पना का सामान्य अर्थ व्याख्यात नहीं कर पाता है कथाओं में कहाँ पक्ष को ही देखने का प्रयास है। कल्पना का दूसरा पक्ष, जो आभासिकता से सम्बन्धित रहता है पूर्वांकुर उपेक्षा हो गया है। यह रामचरित मन्मति के शब्दों में "अनुपरिश्वेत मायाव्यवस्था की ज्ञाता-निश्चित" खड़ी करने की शक्ति का नाम कल्पना है। यह रामचरित मन्मति की ज्ञाता भाषा में जो सबसे बड़ा दोष है, वह यह कि कल्पना केवल अनुपरिश्वेत पक्ष की ही नहीं बल्कि
उपरोक्त की भी मान्य-प्रतिमा खड़ी करने में सहायक होती है। डॉ० नोद्धा ने लिखा है कि "कल्पना उस शक्ति का नाम है जो पहले कौन को वर्ण-विख्यात का मनसा लाभार्थकार करती है और फिर भाषा में पिछलकाल का समावेश कर प्रोत्साहित करने में। पर्यावरण और जाज्ञात संस्कृति के अनुसार कल्पना का एक विशेष भाग होता है।" 55 नोद्धा ने यह परिभाषा अन्य परिभाषाओं से व्याख्या की है, क्योंकि इसमें कल्पना के तरीक़े-संबंधों को अंकित करने की कोशिश है। 56 डॉ० प्रथामन्दर दाते अनुसार मन की एक विशेष तत्त्व से समर्थ शक्ति द्वारा संचालित आवश्यकों को विकसित कर और फिर उनके पूर्व-पश्चिम कार्यों को इच्छावशिष्ट बनाकर धारण करने में उनके सहयोग को कल्पना का अहम भाग होता है। मन की इस तत्त्व को कल्पना का अहम भाग होता है। इसलिए भी कल्पना का स्वप्निक व्यापार का निर्माण नहीं हो पाया है। अतः उसमें भी कल्पना के तरीक़े-संबंध कार्य व्यापार का निर्माण होता है। रिहन्स्या तारिख में कल्पना पर स्वयं-स्वयं सार्थक विषय शास्त्र जी ने किया है। उनके अनुसार "मानसिक स्पर्श-विवेक का नाम ही संभावना या कल्पना है। इन्हें अनुसार काव्य के सम्पूर्ण विभाग और अनुभव कल्पना द्वारा ही विविधता होती है। 56 काव्य के उपायों में भाव को घोरकर बहुत भी को दृश्य की न कल्पना को सीमा के अन्तर्गत ही माना है। 57 दृश्य की ही इन विषयों से पता चलता है कि वे कल्पना को बहुत ही महत्त्वपूर्ण तरीक़े मानते है। उनके अनुसार काव्य उपाय में कल्पना की आव हंग सुझाव होती है। काव्य के स्पर्श विवेक को तो पूर्णता वे कल्पना यही आस्थित मानते हैं।
पाण्डवालय विवाहको से भी कल्याण पर विवाह रिख्या है, किन्तु चेतन विवाहको वो होिकर और तृप्ति ने भौस्थ-भौस्थी द्वारका का हो परिवर्त रिख्या है। चेतन ने कल्याण को आस्था से मणित और आदर-अदरक तर्क का साधन माना है। हालांकि कल्याण को एक सर्वसाधारण शक्ति हो आग्रेत देय की जीतमाती माना है। अतः ने कल्याण को जीवन के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं वे विवाहको का स्वेतित शरीर शुद्धित करने का प्रयत्त साधन माना है। कांटे ने खिया है कि कल्याण वह सहज है जो उस अनुभव वस्तु को भी दशबा गोपर प्रती प्रवृत्त संवेद तम्मक प्राप्त नहीं है; सत्तनुभुति का अंग बना देती है। अभी कांटे के रूपों विलक्त का महत्त्व प्राप्तक, शेषिक, को तो वकल्यन से इतने अत्याचार है कि उन्होंने कल्याण को ले हो सब मुद मान लेते हैं। की तस्के के विवाहको में सत्ता का उपयोग कल्याण के छाया ही होता है। सत्ता की उपयोगकर्त्र होने से ही उन्होंने इसकी दुलना आधम के लपरे ते की है।

लेकिन तुल्य वाणिज्य साहित्य में कल्याण की शर्म हूँ, पुर्ण भाष्यद्वारा अौद्धिक ने ही है। उनके अनुसार कल्याण भाषानन्द की एक पौष्टिक है वो प्रायः गौरवत मूलक और संवेदन प्रयत्न द्वारा करती है। इसलिए कल्याण जीवन में पिनतन और प्रिया के बीच एक साधारण आन्दोलन प्रश्न करते हैं। क्षणिक वो यही कल्याण परिवर्तन की आधारत आदर्श है वो पाहता, वर्धक, त्रोता, अद्यावत सिद्ध तक भी सीमित वा प्रेषित करने का साधन और माध्यम बनती है। 68 इस प्रकार हम वेदिते है कि साहित्य और उसकी रचना प्राप्त है कल्याण का रोकने का लक्ष्य है।
शुक्ल जी के विचार में कल्पना के दृश्यः यो खेल होते हैं — प्रकाश,
विषयक कल्पना, द्वितीय, ग्राहक कल्पना। विषयक कल्पना, वहाँ कोष के लिए अभीजत होती है वहाँ पर ग्राहक कल्पना पाठक के लिए। इसी के तहत राजन के केंद्र बिन्दु तक पड़ने में सफल होता है। अन्य विचारकों
ने भी कल्पना को दो अर्थों में विचार रचाई है, एक अर्थ में कल्पना वस्तु
तत्त्वों के तात्त्विक श्रेणों को दर्शाकर रखती है तो दूसरे अर्थ में कल्पना
वस्तु तत्त्वों के मानन्त्विक भावों से निरन्तर विभिन्न विपरीत अंशों
के संयोजन प्रचार करती है। यही दूसरे अर्थ वतो कल्पना की कल्प की
उद्देश्य होती है वेस्ट्र के विचार में मानते है। उनके
फलक कल्पना के एक विधा के विचारियों के लिए यह
dरचत यथा मानते है। किसी
आर कल्पना के विधान वाली विचारियों के लिए
कल्पक कल्पना वाली अवधाप के निर्णय
प्रथम श्रेणी की छट्टी 
कल्पक कल्पना के निर्णय प्रस्तुत करती है। दूसरे अर्थ में वह एक "झुक्कापाटक" या "पुनरः
तत्त्वशास्त्रीय परिवर्तन वर्गों या वहाँ अभ्यास की ही 
वास्तविक रचना तत्त्वों का मानन्त्विक धरातल
पर साधारण करता है और दूसरे अर्थ में वह एक "पुनरः
वास्तविक श्रेणी शिक्षा" है, किसी
कल्पक कल्पना अन्य अभ्यास अवधापन
प्रथम श्रेणी के निर्णय प्रस्तुत करती है। इसी
के माध्यम से अभ्यास भावों को विभिन्न 
विधान प्रस्तुत करते है। कल्पक कल्पना के
दो अर्थों से निर्णय प्रस्तुत करते है। कल्पक कल्पना के
कल्पक कल्पना के
कल्पक कल्पना के
कल्पक कल्पना के
जबकि लेखकी कल्पना दीनशाय गोपर भ गत के पृथक् सव प्रभाय तीव्रताओं को एक मानसिक धारताल पर विपिलक्ट और लपिलक्ट कर एक अर्थ तथा निर्देशन प्राप्त करती है *** प्राइमरी कल्पना में प्रत्येक निम्नक्षण है, जबकि लेखकी कल्पना में क्लासर की देशत उद्ध वैकाशिक पिथल के सहयोग से सत्यव्यति प्राप्त पृथक् के बीच दर्शन आता है, और तब उन दृवंतायकों के समीकरण ते एक गुँता निर्माय होता है। 57

साहित्य के अलावा कल्पना मनोविज्ञान और विज्ञान के लिए भी विशालसीय विन्यास रहा है। इनमें भी कल्पना के जोरकूर बढ़ता: आलोचना-सृजनोत्सर हुआ है। मनोवैज्ञानिकों की दीर्घतम कल्पना पुकार: 5. प्रारंभ की होती है =
10. दीर्घ उत्सर, 2. द्वितीय कल्पना, 3. स्वर्ण द्वितीय कल्पना, 4. प्राचीन कल्पना
5. द्रिक कल्पना, 6. सा कल्पना। इनमें द्वितीय कल्पना, स्वर्ण द्वितीय कल्पना प्राचीन कल्पना तथा द्रिक कल्पना का साहित्य ते अनुभव सब्ज्य है। इनके माध्यम से जहाँ विषय-प्रत्योगि के निर्माण में सहायता मिलती है वहाँ पर से विभिन्न एवं नीतिक भी बनाती है। प्राचीन कल्पना का तो संदर्भ में विकस्थ रथियन विशाल प्रत्योगि है। मनोविज्ञान में कल्पना की द्रिक एवं उपित्याचारों पर भी विस्तृत के पश्चात मिलती है। इसके अलावा कल्पना की प्राचीन विश्व उपित्याचार है, द्रिक, लिखित, विद्याप्राप्त, सांगीकरण एवं प्रवृत्तिकरण। विस्तृत कल्पना की विभिन्न वशुके के उसके वार्तालापी लघु से व द्राह्ता कर वर्णन में सहायता करती है। लिखित कल्पना का कार्य ठीक इसके विपरीत है। इसके विज्ञान के उसकी यथार्थस्वर्ण लघु विशेषता से छोटा से छोटा बनाकर प्रस्तुत विश्वास जाता है। कल्पना के प्रशास्त्र उपित्याचार में कल्पना के द्वारा प्राप्त अनुभवार्थियों में सव विपयार्थ अथवा उन पर नवन ध्यान का
आरोप किया जाता है। संयोगिकता कल्पना के द्वारा रचना में उज्ज्वला जादू-सृष्टि इत्यादि गुणों का समाक्ष होता है। कल्पना की पूर्व-जगत अपरिच्छेद या पृथ्वी के छायारे प्राथमिक तारीख और तिलखंडी पेश्वारी कथाओं में उन्नतत्व तथा ऍ देखने को मिलता है। इसके द्वारा विशेष अद्वितीयों को नवीन स्थ में प्रस्तुत करने में काफी मदद मिलती है। पीरामिक तारीख में प्राप्त अद्वित, बर्बरीक के पूरा पूरा ज्ञान के कारण है। मनोविभाविक ने कल्पना के दो जन्मे में भी इसका प्रभुत्व पुनरंजन कल्पना और दूसरी रचनात्मक कल्पना। पुनर्उक्तिकता कल्पना के उन्नतत्व सृष्टि के माध्यम से पहले की उन्हें अद्वितीयों को जाना कर मान्य बिंदुओं में भवित करता है। रचनात्मक कल्पना के द्वारा विशेष अद्वितीयों को जन्म आता प्रवाहित किया जाता है। रेता देखने में िाता है कि रचनात्मक कल्पना, ध्वनि की स्वरों से पुनर्उक्तिक की अन्य भाषा उपयोगी होती है। इस रचनात्मक बारे के दो उपस्थित होते हैं, पुनरात्मक अद्वितीय कल्पना, दूसरी, भाषात्मक नकल कल्पना। इन दोनों में भी तीनों ज्ञात कल्पना की ध्वनि में संपर्कित होती है, ध्वनिक बारे की ध्वनि ज्ञात होती है। इसी के माध्यम से कल्पक आत्मवाद उपयुक्त और लिहित बिंदुओं और अद्वितीय विद्याओं की योजना में सकल होता है। इसमें कल्पक को उपयोग-अनुपयोग, प्राथमिक अद्वितीय का में और ध्वनि करने की दूरी घटना होती है। पुनर्उक्तिक रैफाइल एवं रैफ ने इसकी दीर्घ नवलपर जानकारी दी है--उपयोग, अद्वितीय, विद्वान और परोक्ष। इनके अनुसार प्रत्येक अक्षात्मक की बारे में इसे होकर वक्त करता है।
वर्णन की दृष्टि से कलपना दो प्रकार की होती है, प्रथम, जीवन-मुक्त कल्पना और दूसरी, जीवन-निष्प्रारी कल्पना। प्रथम कल्पना क्लास्कार को आकाशी की सौंदर्यता है तो दूसरी उसे धरती पर रखनी है। बोधन की जीवन-मुक्त कल्पना को स्मृतिमने बनाता है इसी कला में भावंकर, कामनीयता संन्यासीता और बायथ जीवन की वास्तविकता का साहस दिखाई पड़ती है और जीवन-निष्प्रारी का साहस प्रकट है वह इसी कला की सामग्री प्राप्त करने से टकरा कर कुछ रितक अनुमान एक कर उन्हें रचना में दालता है। इस प्रकार कल्पना देखते हैं िक कल्पना और कला दोनों में आंत घिरकर सम्बन्ध है। कला खुद में कल्पना का कार्य कला के आधारभूत अध्ययन से लेकर तब तक वर्तमान ने चला कर तब तक िक यह अपनी ज्ञाति को प्राप्त नहीं कर सकती। इसका तार्किक यह है िक कल्पना का प्रारंभ, भाव-रूप को समझ सकते हैं। रचना कलाओं में कल्पना का प्रशंसक सुंदर कलाओं तक शामिल होता है। काव्य, दृष्टि-काल है, इसी अमूर्त भावनाओं, अवसरों का कृतिकर्म किया जाता है। काव्य में बहुत बुद्ध छोटों, धातुं तथा बुद्धों की उपजाति रह ती है। यदी कारण है िक काव्य के सन्धियों में कल्पना अन्य कलाओं की अपनी व्यामा महत्वपूर्ण है।

काव्य खुद में कल्पना प्रमुख: चार रत्नों पर कार्य करती है। इसी प्रथम वह अभिज्ञर वर्तमानों को मानने विद्यार्थियों के पूर्व: प्रत्यावेशन से परम्परा उपविश्वास भाषा की तलाश में करती है। यदि भाषा भाव के अनुमान नहीं मिलती है तो वह वर्तमान-अभिज्ञर नवीन बनाता है और नये रूप का खुदन कर उसे संकल्प-अभिज्ञर-योग्य बनाता है। कई बार वह दिखाया जाता है िक कलाकारी दृष्टि की सर्जना उपने बाले रचनाकार कल्पना से अपने को गोपीदूर
रखो हे क्योंकि झलना क्ला को घूरीहो बना देती है, लेकिन यह बात तर्क नहीं है। कल्पना तो सूर्य-प्रिया का यह तर्क है जिसके बिना रचना की कल्पना करना ही असंभव है। इसी के द्वारा रचना को आधार गितता है और रचना कार को जीवन-वगत को जीति प्रभावी है से दिशित करने की क्षमता प्रदत्त है।
यदि नहीं, कल्पना के ही योग से रचना में मौलिकता का समावेश होता है, इसी की सहयोग से कलाकार विजय का अवधार कर वर्तमान को जीवन्त बनाते हुए भविष्य की आधार-शिला रखता है। हाँ, यदि इसके कलाकार की जीत में कल्पना की शेषी दौड़ पिछलई पहली है तो वह प्रेय नहीं होगी, किन्तु इसे होना भी कल्पना बनाना बोध नहीं है जितना रचनाकार की अभ्यास का प्रमाण। कल्पना में उदय, नाटकीयता आधृत्यात्मकता, रोमांटिक, लम्बालता, सौंदर्य इत्यादि गुण कल्पना की दैन होते हैं। काव्य में भाव और भाषा सम्बन्धी बाल्यकाल भी कल्पना के द्वारा ही संभव होती है।

खिम्बः:

नित्य-प्रिया के जीवन में हम जो कुछ देखते, उसे और अभ्यास करते हैं, उसका इसके स्थे हटकर हमारे मानसमत में एक आकार उभरता है। इसी प्रियाकार को सादृश्यक शब्दावली में हिस्सा बनाते है। एक अर्थ ही इसे विशेष शब्द का समानार्थी है। इसका अर्थ कोष में प्रतिष्ठाप, रूप, अनुप्रयुक्त इत्यादि दिखा हुआ है धार्मिक व अनुशासन व तुल्य और परिवर्तन का, जो समय पसी विशेष समय में उपलब्ध नहीं है, भावात्मक बोध ही खिम्ब है। अथवा कलाकार
अमृतस्थः वर्णोऽवंशः सुर्विन्यत्वः को बिंबः के माध्यम से ही जीवन्त बनाता है। तेहो तेहो लेखित के अनुसार "बिंब शब्दों से बना हुआ पित्त है। 70 अगर आपने इस द्वीपकोण को स्पष्टता प्रदान करते हुए उन्होंने लिखा है कि काव्य बिंब, भाव आत्मा भावावस्था से अर्थत शब्द पित्त है। 71 हाँ, कोङ्कल के अनुसार "तरंजा के शब्दों में अर्थगत ते नाना स्पष्ट को एकता पर उलझे होकर जब शब्द अर्थ के माध्यम से प्रकट होने का उपलब्ध करते है, तो इस संदर्भात के परस्यः अनेक मान्त्र-सिद्धांतः आकार धारण करने कथित है। जलोपना की जलस्थिति में इस्तेमाल की काश्य पिंगल कहते है। 72 हाँ, तिथियारंग तिलवारी के काव्यों में "बिंब शब्दों के द्वारा उपलब्ध यह मान्त्र प्रतिमा है, जिसका प्रभाव शृंगार्य होता है। 73 जब प्रतिभाकार परिभाषाओं को देखकर यह स्पष्टता है कि बिंब मधुन अथवा विश्वासों के रूप में भावावस्था से लग्भग पित्त है, तो विशिष्ट प्रारंभ शब्दों के माध्यम से होता है और यह शृंगार भाव होते हुए शृंगार गम्य होते है। बिंब का कला में अभिद्रत्त महत्त्व है। यह जहाँ पर कलाकार और तद्धृत्य के बीच सेवा का काम करता है, वहाँ पर "बहुत अंगों में कलाकार की सहभागित की अभिज्ञानता को प्रकट करता है और कलाकार की सोदर्ध वेतना को घोटित करता है। 74 बिंब ही यह साधन है जिसके माध्यम से कलाकार की अन्तिम अथवा, सिद्धांतों वेतन को मूर्ति तथा दूरत अथवा, तद्भवों, सत्य एवं सौंदर्य व्याख्या को अंबेन्त्र प्राप्त होती है। लिखत कला के पिंगल कला, संगीत कला, इत्यादि अन्य भेदों उपयोग का अभ्यास कायत्व कला महत्त्व है।

इस बिंब तथा पाष्पार्थ सब पौर्वार्थ सबी मिश्रण नहीं है।
हाँ सिवाराम रूपारी को कथन है कि प्रयोक्तार काव्य कृति स्वयं में एक रिबंध है। अपनी तो जब ग्राम का अभ्यस्त-समय तम, उसकी व्यलक्षण करने के लिए विक्रांकित की आवश्यकता होती है रिबंध उसमें से एक है। 75 नाचक ने रिबंध को कीर्तित का ग्राम मारने हुए लिखा है कि "रिबंध विधान की उपस्थिति नहीं, अज्ञा प्राण तत्त्व है। 76 खारा पाउड़ तो रिबंध की अवधि से इतना अर्थमूल है कि उसने तत्त्व तत्त्व के डाला है कि बेरी बेरी पोढ़े लिखी की अपेक्षा जीवन भर में केवल एक रिबंध स्थान आयी वेतन है। 77 परंतु यह दृश्य स्थापित नहीं है। रिबंध विधान का कीर्तित में महत्व अवश्य है, कथा को तहस्वित तत्त्व स्थापित करने की अवश्य अवधिक होती है किन्तु काय तत्त्व रिबंध नहीं है और न केवल एक अवधि अवधि ही अवधि कहलाने का गोष्टिकार है। यह अलग आता है रिबंध से कीर्तित में ईन्द्र ग्रामकात, स्पंदकात, स्पंदकात, पालता अवश्य आती है। जाने-अज्ञातों प्रयोक्त जीव के कथा में इसका पुष्प होता है, खराब अभिव्यक्ति का यह एक आवश्यक विधान तत्त्व है, तात्पर्य हो रहता प्रक्षेप और आँत जन्मात तत्त्व है। 

दिनकर की ने उक्तता की भूमिका में झों तथ्य की पुष्पि दर्शते हुए कहा रेक रिबंध की एक आवश्यक दृष्टि है, पुष्पि दर्शता वालिक्ष विषय यह कीर्तित का एक मात्र ज्ञात तत्त्व है जो उसे उसे नहीं पुष्पित। सर्वाधिक रिवाज तत्त्व को स्पर्शित करने की प्रक्षेप यें द्वे विद्यां विधान वेत भाषा का श्रद्धास्त करता है कि तहस्वित अपने मानने पदलक्ष पर वे ही विषय का अभाव करता है अपना 

सर्वनिर्मल अपने पोषक भाषा मात्र होते तो हुई अबाप्त ग्राह्य करता है वह विक्रांकित स्वयं में स्वरूपित होकर रिबंध के माध्यम से ही कीर्तित में उभरता है। इन्हीं के माध्यम से पाण्डुर जीव के मानसलय का अवसर करता हुआ स्कारार रिस्वति ग्राह्य
कर कलाकार का समान्यत: बनता है और तब तक बना रहता है जब तक वे उसकी अनुमूल्य उत्तम मानना में अधिकता होती रहती है।

बिन्म का उदाहरण व्योत कल्पना है। जब कल्पना पूर्व स्थान दार्शन करती है तब वह कल्पना न रटकर बिन्म बन जाती है। वे बिन्म उद्यापदक कल्पना की दृष्टि के हिस्से पर पुन:स्त्रापदक कल्पना से निर्मित होते हैं। पुन:स्त्रापद कल्पना से उद्यापदक होने के कारण ही बिन्म स्थायी विभेद होते हैं। बिन्मों का यह गुण अलग दोनों क्षेत्रों ही क्षेत्र और वैधव्य और आलोक-प्रदान क्षेत्र है। बिन्म निर्माण में पुन:स्त्रापद कल्पना गुज़रत: दो स्तर पर कार्य करती है -- "पहले कल्पना स्वतंत्र क्रोध में लगे हुए बिन्मों को प्रत्ययोपलब्ध अनुभूतियों के स्वरूप से समझा है।" 78 दूसरा उन मूलबिन्मों को विश्वासु जैसे अंदाज़ में प्रदान करती है। मूल बिन्मों में कॉट-वॉटर करना भी कल्पना का ही कार्य देता है। विश्वासु जैसे अंदाज़ में प्रदान करने के कारण ही प्रयुक्त बिन्मों और उनके मूल रूप में बहुत संक्षिप्त अन्तर आ जाता है। यही भिन्नता, व्यावसायिक रूप से उनके विभेद की क्षेत्र में स्थापित करती है। परंतु रचना प्रियोग के जीतम दौर तक आते-जाते लघु के बन-सामान्य स्थूल देने वाले स्वतंत्र बनाने स्वतंत्र व्यावसायिक स्थूल में सम्पन्न बनाने के लिए प्रयुक्त सामान्य स्थूल पर स्थापित कर देता है।

बिन्मों का महत्त्व कार्य,लघू के भावों स्वतंत्र अनुभूतियों का वाहक बनकर उनको प्रेषण और ग्राह्य बनाना होता है। व्यावसायिक ने यह भाव है कि इस प्रसंसे में "स्टार्ट अप" स्थापित करने की रहता है। आरंभों से आगे होने
के कारण हीउद्धृत विषय में यह गृहीत होते हैं -- गृहम, विश्वनामत तार्किता और दृश्य, वास्तविक संघृत। इन्हीं गृहों के कारण विषय, वस्तु अर्थात किंविषय
को उसके समूचे परिसंरेखा के साथ समानुपातिक रूप से उत्साहितता
प्राप्त करते हैं। केवल विषय विचार और विषय धर्मी केवल सर्वाधिक दोनों की
उत्साहितता का यही प्रमाण है। इसके अलावा प्रत्ययता, तीर्थणता और
उद्योगनक्षत्र भी उद्देश्य लिये के टाइप है। १७५ जिन विषयों में
ये तीनों गृह विचारण रहते हैं, ये ही कौन के भावों को चुनौती और ग्रामदा
बन जाते हैं अतः ये आपस्र सहित होने।

काय्य विषय पर प्रात्ययता विचारों के कारण भारतीय विचारों ने
भी अनेक वृज्ञायों तैराक रखिया है। इन लोगों ने इस स्थान का प्रमाण
वादो मानकर इन लोगों ने लथक से निंदात्त भिन्न मानकर इन ने विचार
मानकर यह रेतिन्यक अनुभूति मानकर इत्या विचारनिक्रम है। परन्तु विषय
न तोतेम्बल अन्धकार रहते तथा विचारों ने न केवल किया है इन: प्रत्यय
ही। इत्या वजना योग होता है। इत्या जब पर वांधु पथ प्राप्त होता है
इनों पर रेतिन्य रथ भी। इन उपरों में ती रेतिन्य रथ की प्रमाणता होती
है क्योंकि काय्य में हम इने तारा मानसिक तात्त्विक ही करते है।

मनोनीत्रणों के कारण ही प्रत्यय ज्ञात का भी विषयों के माध्यम से धार्मिक
करते है। अत: विषय विचार को उत्तार की रेतिन्याभूति पर रेतिन्य मानसिक
लघुत्तमों की इन वस्तु फिरों अक्षता विचारनिक्रम श्लोकों के माध्यम से एक भी केवल
प्रभाविति मानना जो हमारे हिंदी मानसिक धरातल पर इन्द्रक्रिय राय
अथ्या इन्द्रक्रिय राय हो, अतः हमारा अवधारण प्राप्त होता है। १८० लेकिन
यह दिया वस्तुनिष्ठ आधार के बिना सम्भव नहीं है। कोई भी विमार खुश
होने या उच्च प्रति हमारे लिए तभी उच्च हो सकता है जब उसका कोई स्पर्श या
आधार प्रकाश हो। इस प्रकाश हमें देखने है कि "वस्तुनिष्ठता और बीमार-गोरे
विद्याः विद्याः के लिए आकर्षक तत्त्व है"।

यह बताते हैं कि हमारा मानना स्वतंत्र है जिसे अनेकों
घटनारूप, उनके पिता, पितामह, उन पितामहों की पूजनीयता लेकिन रहती है। समय
इसे पाने पर यह उद्देश्य हो बनता है तथा उनके माध्यम से हम अपनी अनुभूतियों को
लेखनकर्तार सर्व स्वैपुत्र व्यापक अभिव्यक्तिता प्रदान करते हैं। लेकिन इसके बाबाबा भी
और आधार है, जिनके माध्यम से हम बीमा निरीक्षण कर सकते हैं। इसी किसी
पीढ़ी देने वाली वस्तु के आधार पर, अनुभव के आधार पर, किसी पीढ़ी के आधार पर,
किसी पीढ़ी के आधार पर, मानविक
घरणा के आधार पर इत्यादि। बीमा निर्मिति में जो लगते बड़ी दृष्टि है,
वह यह निश्चय संबंधितों की रचना केवल भोग हें व्याप्ति और मिश्र हें
बीमा के आधार पर ही नहीं की हमें हमें
शिष्यों का आसार करते हैं। किसी का आसार करते हैं। वरन् ऐसे बीमा देश काल से ज्यादा
लोगी होते हैं। इन प्रकार काल और युगों ने परिस्थितियों एवं विवार धाराओं
कार्यालय जान पड़ता है और वे उसी तद्नंदन में निरीक्षण होते हैं। उदाहरण
स्तवथ्योऽस्मात् कालीन कृपालादानोऽन् ऐसे रस्मि भिक्षे हैं, वैसे बीमा रोगित
कालीन कृपालादानोऽन् नहीं और वैसे रस्मि रोगित कालीन कृपालादानोऽन् देखने को
भिक्षे हैं वैसे आधारावक कालीन कृपालादानोऽन् नहीं भिक्षे हैं। दूसरी बात जो
उल्लेखनीय है, यह यह कि विम्ब व्यक्तित्व लेख और प्रस्तुति से भी प्रभावित होते हैं। प्रत्येक कलाकार अपनी सूचि के अनुसार विम्बों की संख्या करता है यही कारण है कि जिसी में विभिन्न विम्बों को अधिकता रिलाइट है जिसी में अधिक विम्बों को जिसी में स्पष्ट विम्बों को तो जिसी में ध्वन विम्बों को।

उपर्युक्त विवेचन से विम्बों के रचना स्थल के विज्ञ में निम्न किसी प्रकार होते हैं ---

1. विम्ब अभिव्यक्ति के भेद हैं।
2. इनका विम्बलकण तत्त्व का दारा निर्माण अनुभव के आधार होता है।
3. विम्बों के निर्माण में सूचि का आधारण योगदान होता है।
4. इनका संगठन तथा अवशेष इन्द्रियों, श्लोक, स्पष्ट, स्नां और गंध होता हैं, स्वयं इन्होंने दारा विम्ब प्रवर्त होते हैं।
5. विम्बों पर देशवाल के ताथ हो साथ व्यक्तित्व लेख का भी आधार पत्ता है।
6. विम्ब निर्माण के अनुभव के हैं। यह कीप के कीपल और कमता पर निर्भर करता है दिक वह उन्हें कहाँ से उपलब्ध करें।

विम्ब रिकार्ड के होते हैं यह न तो आवश्यक निष्पक्ष हो पायथा, न आवश्यक समय में हो हो पायथा। क्योंकि विम्ब का क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। यहाँ पर विम्ब का सम्बन्ध समाज से है वहाँ पर मनोविश्वास है, और यहाँ पर भैलिका से है वहाँ पर संभावित और परस्पर से भी।
काव्य विभवों का यह सुझाव होता है कविता का काव्य में रिकाशक, ध्वनि-नित्‍‍य या स-अ-न-प्रथम उपस्थता नहीं करती। वह हमारी भूमिका की बात हाथ आन्तरिक गीत ने शैशव से हमारी इतिहासों के तार-सींहों को इंग्लैंड कर देती है। इसलिए काव्य का ध्वान में रहते हैं इसी द्वितीयक ने कई गर्व वर्णित कर का महत्त्वपूर्ण है। सर्वगुण द्वितीय ने भुज महत्त्वपूर्ण वर्णित कर का वर्णन जा रहा है।

1. शुरू विद्युत में हमारे पुस्तक "सीन्द्र शास्त्र के तत्त्व" में विभवों के दो पुस्तक बताते हैं। लेखक विभव इंटरकेट इंजीनियर, 2-अपलोडित विभव 1-प्रेममात्रिय इंजीनियर।

2. इंटरकेक्ट स्पेक्ट्रम इंजीनियर नामक हमारे पुस्तक में विभव अंतर और तत्वों की संह बताते हैं। हमारे को पुस्तक अंतर और तत्वों की संह देते हमारे दो भागों में यह संग से बांटा है - 1- कन्याकुल इंजीनियर या लेम्ब्रेक्ट इंजीनियर, 2- लूस इंजीनियर या डिफ्यूजित इंजीनियर।

3. अपने इंजीनियर ने हमारे पुस्तक प्रोफेशनल पेट्रिंच में विभव के द्वा पुस्तक बताता है - 1- लैम्ब्ल इंजीनियर, 2- अब्स्ट्रैक्ट इंजीनियर, 3- इंट्रेक्टियोट इंजीनियर, 4- डिफ्यूजित इंजीनियर, 5- अब्स्ट्रैक्ट इंजीनियर, 6- कार्बनेट्रिक इंजीनियर, 7- कामब्राइंड इंजीनियर, 8- कामब्राइंड अब्स्ट्रैक्ट इंजीनियर, 9- कार्बनेट्रिक अब्स्ट्रैक्ट इंजीनियर, 10- अब्स्ट्रैक्ट कामब्राइंड एक्ट अब्स्ट्रैक्ट कार्बनेट्रिक इंजीनियर।

4. डॉ लीजियन अपने पुस्तक स्पेक्ट्रम इंजीनियर में विभवों का दो भागों में वर्णित किया है - 1- सजिय विभव, 2- वाह्य विभव।
5. डॉ॰ वियाराम विवाही ने निवळ का सम्बन्ध कवितायां ते मानते हुए पौर शारीरिक व्यक्ति, श्रोत, तपक, अभ्यास और सत्ता ते सम्बन्धित पौर पुकार के निवळ की संभावना व्यक्ति की है। इन्हें ते वाण और श्रोत दो पुकार के निवळों को महत्वपूर्ण मानता है।

6. डॉ॰ श्रीनाथ विवाही ने निवळों को तीन दो मार्गों में बांटा है -
   1. निवळ विवळ, 2. मान्स विवळ।

7. डॉ॰ वलास वाज़ोली ने निवळों के 6 पुकार माने है - 1. दृश्य निवळ,
   2. वात्स निवळ, 3. साथ निवळ, 4. अल्प निवळ, 5. सातः निवळ,
   6. पितृ निवळ।

उपर वर्ण निवळ निवालों तीन विनिवळ के कार्यक्रम निकायत:
तीन आधार विनिवळ के है - किस्मत, अग्रवालिक और साथ। इन तीनों की शाखा निवाल में भी महत्वपूर्ण व्यक्ति होते है। उत: निर्देश रूप में विनिवळ के तीन पुकार माने जा सकते है - 1. निवळ विनिवळ, 2. मान्स विनिवळ, 3. सातः विनिवळ।

इन्हीं गणों के अन्दर सभी विवळों का समावेश होता है।

श्रीनाथ विवाही में प्रतीक श्रीनाथ शाखा निवाल के पर्याय के रूप में प्रवृत्त होता है।

व्यापक तृतीय दृष्टि से प्रवृत्त अनेक दृष्टि प्रतीक अर्थ दिखाकर प्रवृत्त हो या दिखाव पस्त की अभिव्यक्त हो, उसे प्रवृत्त कहते हैं। द्वारा लेखिका के आदर के प्रतीक उस हस्त वर्तमान के लिए आता है जो अपने तत्त्व के तत्त्व संबंधित से अद्वितीय वर्तमान का ज्ञान कराता। द्वारा लेखिका के आदर - "पिता पस्त या साथ के द्वारा बोध या बानकी प्रवृत्ति अथवा
प्रतीक होता है, उसे प्रतीक कहते हैं। यद्यपि शब्दों के आधार पर प्रतीक वर्णन के अनुसार प्रतीक वर्णन का विषय निर्देश नहीं होता है। इसलिए, रूपक और उपाय की विशेषता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रतीक एक सैद्धांतिक जीवन का बहुत ही बड़ा विशेष निर्देश अथवा व्याख्या पर तत्त्व का उपयोग होता है। डॉ. एम. साराजी और उसके मार्गदर्शकों के आधार पर यह रिपोर्ट जा सकता है कि प्रतीक एक सैद्धांतिक विश्वास की रूपमें किसी प्रतीक वर्णन अथवा व्याख्या पर तत्त्व का उपयोग होता है। डॉ. एम. साराजी "पृथ्वी के विभिन्न उपायों" और "रक्षक" के तत्त्व पर यह लिखता है कि तत्त्व जब तक होता है तब तक उसकी अवलोकनशीलता रहती है। यद्यपि जब हम रामायण का आदरण करते हैं, तब हम उसकी अवलोकनशीलता होती है, किन्तु यदि रामायण का मानने में पूर्वी रिसर्च करना हो उसे अलग-अलग देखा जा सकता है। रामायण के लेखन के रिसर्च के नाम प्रतीक है। 88 डॉ. एम. साराजी ने "अमृतानंद शर्मा के बाद में "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद का नाम प्रतीक है। 88 डॉ. एम. साराजी ने "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद के बाद में "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद का नाम प्रतीक है। 89 डॉ. एम. साराजी ने "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद का नाम प्रतीक है। 89 डॉ. एम. साराजी ने "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद का नाम प्रतीक है। 89 डॉ. एम. साराजी ने "अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद अमृतानंद का नाम प्रतीक है।
उसमें एक विशेष तैत्ति के तार-सत्ता अर्थमत निषिद्धता भी होती है परन्तु
उसके लिए आवश्यक नहीं कि वह बीत गरिंद्र के प्रतीकों के समान वृद्धि गम्य
और तरी-तराई भी हो। ९१ दूर्दी वुधी-न्दूर कहते हैं कि "प्रतीक प्रस्तुत: अन्तर्गत की
समस्त जाति या धर्म या भूमि का समान्वय स्वतंत्र नहीं लेकर आने वाले प्रस्तुत का नाम
है। प्रतीक अन्तर्गत का अवलोकन है।" ९२

बेसवेन्द्र ने प्रतीकों को अन्तर्गत प्रस्तुत का उल्लेख कहते हैं। ९३ बालेकेश
कहते हैं कि कौन आपसी या अपने स्वभाव को प्रतीकात्मक अनुभव का प्रकाश करने के
लिए इन रचनाओं के संसार में सागरी चित्रण करता है। ९४ इन इन्द्र गम्य संसार के
अपनी जाति के प्रवाह के साथ-साथ की ऊपर गम्य करता है। ९५ सौ सवन बारहवारा
मानक और उसके अनुसार इन प्रतीकों की वर्णन करते हुए प्रकारान्तर से प्रतीकों की
इन्द्रिया पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि "मलामाल और उसके अनुसार प्रतीकभावी
है, क्लासिक वेषाने अलेक्साक अनुभवों के साथितिकता के गाथयम तथा अवलोकन
पाहते हैं। इससे उन्होंने जिन रचनाओं का प्रयोग किया है उसका सामान्य अर्थ
धारित करते हैं। उनका प्रतीक यह प्रतीक के स्वप्न में पुष्कर हुआ है। वह इन्द्र गम्य
गम्य जगत के परे एक सोच अर्थ निपटाने करता है। ९६ इससे अलावा अन्य
पारिवारिक पौर्ववास विद्वानों ने भी प्रतीकों पर प्रवक्ता कहाया है, तभी ने अपने अन्य
स्वतंत्र बालेकेश के अन्तर्गत प्रतीकों का पारिवारिक करने की जरूरत की है। प्रतीक
का समाज, धर्म, मनोविश्लेष, ज्ञानमूलक सबसे सबसे है। इस कारण इनके
विभिन्न वाणिज्य संसार में संकेत प्रबंधन किया गया है। वास्तविक बुद्धित्त से प्रतीक पर
शिक्षा करने वालों में सौ सवन बालेकेश, सन्तों, कार्यरतों, समाज शास्त्रीय द्विविद्या
शिक्षा करने वालों में जौन सवन मर्क, मनोविश्लेषक द्विविद्या के प्रवक्ता करने वालों
मेघावट, खूंट, घुं, बोन्स मिर, लिव्वर आदि का नाम प्रस्तुत है। उपर्युक्त तथ्य पौराणिक विश्लेषण करने पर प्रतीक के विषय में निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं —

1. प्रतीक प्रस्तुत अवस्था के सीमान्त करने अथवा उसके सम्पूर्ण परियोजना के साथ व्यक्ति बनाने तथा प्रस्तुत का नाम है।
2. प्रतीक द्वारा सामाजिक के स्थान पर विश्लेषण अथवा का बोध होता है।
3. प्रतीक देश, काल एवं संस्कृति के सस्त से लिखा होता है।
4. पौराणिकता एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों परान्त के अर्थ को उत्पादित करने में महत्त्व होते हैं।
5. प्रतीक राजसत्त्व में सम्पूर्ण ठोसे के कारण अधिकता को व्यापक बनाने के साथ सही होने एवं अधिकता बनाने को अधिकता बनाने के स्वरूप होते हैं।

इन आधार पर हम यह स्पष्ट हैं कि आपूर्ति भावनाओं, विचारों, विन्दु, रचनाओं, प्रतीक के परेराष्ट्र लय में व्यक्त करने के लिए विभिन्न तरीकों, सामाजिक सत्ता, अथवा व्यक्ति के साथ सहकार के माध्यम के प्रयोग में लाते हैं और हो प्रतीक कहते हैं। संघर्ष बीती वर्तमान के प्रवर्तक के अभाव इनके अर्थ में भी परिवर्तन होता रहता है।

प्रतीक बोधन का अभिनव क्षण है। यह जरूरी ज्ञान भीतर के भावों को पूर्ण लय देता है, वहाँ पर अन्य को भी होता चिन्तन, सिद्धांत, परिस्थिति, भावात्मक व्याख्या तक पहुँचने में मददगार भी होता है। इसे अभी में भी गुरु का आना भीतर की पूजा का सौंदर्य है, उसी तरह हेंद्री शेषे का लाल
टोना, घटी बैठना, होठ, भौगोलिक, उत्तर व गृहिणित होने का सिद्ध है।
ह्यारी सब हरी बीमारीयों ह्यारी बीतर के भाषी-विपरीतों को प्रतीक होती है।
अतः भय नाते सोताइयों में देखा जाता है कि यह बात की बात को दुनकर बुझ
लोन में वो भाषारता है या वो अंग्रेजियों को उपर उठाते हैं, तब जब बही
क्ला झंडा पिछलाते हैं, कभी आपात लगाते हैं, कभी मोन भाव ते तसी शोरोता
तब तक कांत और अकस्मा को बात की तरफ लाते रखते हैं जब तक कि उसकी
बात समाप्त न हो जाय। ये बातें प्रति प्रतीक-वस्त्र प्रति लापर होती हैं। इस प्रकार
प्रदेशों होते हैं एवं प्रतीकों का ह्यारी बीतर के प्रति-क्रिया में संरचना है। नाता
स्पष्टतया अधिक नेर जो प्रतिक, उद्द-प्रति की स्त्री द्वारा संपन्न और इसी
स्त्रीता पर्याप्त लागू में हैं उत्तरात्मा है अवधारणा में, बिन्ह स्वयं में उत्तरात्मा ही
पिछलाये।

क्लासिक प्रतीक और धर्म, धर्म व विधान के प्रतीकों में हृदय अन्तर
यह कि धर्म, धर्म अथवा विधान के प्रतीक: प्रायः स्मृति निर्धारित स्वभाव
अथ रखते हैं। इन क्षेत्रों में प्रयोक्ता प्रतीकों का प्रयोक्ता अथ पौरीवनेक्ता
अथ में कारा क्षेत्रों पाठ्यात्मा वो गत रूप से स्त्रीलय के साध जानता है।
अथात् इन क्षेत्रों में प्रतीक के प्राप्तविध अभिधारण और अथ प्रयोक्ता के संबंध
में प्रयोक्ता और पाठ्यात्मा वो गत गतिः रूप से गत होते हैं। विन्हे क्ला के
प्रतीकों में प्रयोक्ता और पाठ्य, बुद्धि या वो के बीच वो निर्धारित अथ के लिए स्वयं विश्वास एकमत्त्य नहीं रहता 75 क्ला के प्रतीकों में चारे
वह विश्वास के ही अथ वाचा क्ला के चैत बात नहीं होती।
क्यूंकि क्लासिक क्ला में प्रतीकों की तरफ तभी अधिक होता है जब उसके भावों अनुभवों को साधारण, समस्त स्वरूप स्वाभाविक अभिव्यक्ति करने में आसान होते है क्यूंकि अनेक भाव और अनुभवों परस्पर बदल नहीं होती। में होते हैं और उसके अनुभवों के संबंध में सीधे स्वाभाविक बावर का यह कथन रोके वें अने अनौचित्य अनुभवों को अनुभव साधन के माध्यम से प्रायः सरल होते है, वजरे उन्होंने जिन भावों का प्रयोग किया है उनका साधन अर्थ अभियोजन नहीं है, उन्होंने प्रस्तुत अंश प्रदेश के रूप में प्रस्तुत हुआ है वे हानि करते हैं पर वे नहीं अर्थ की उपस्थिति होती है। 

वह शिक्षा अर्थ की स्थिति ने इस प्रतीकों का उपयोग करता है। मानक जिनका नाम सरल गृह के संबंधों में सक्षम रूप से शिक्षा जाता है, का तो मत है वह प्रतीकों का स्वाभाविक गति नहीं होती और वो बोध गति होता है वह प्रतीक है ही नहीं। १०३ भवानी बावर अर्थ पर अर्थ, बसन स्वरूप विश्वास के प्रतीक प्रती: शिक्षा स्वरूप प्रतिक का रूप है प्रभावित प्रतीक छूट गहरे पर अपेक्षित के प्रतीकों प्रतीकों: विश्वास, दृष्टि कार्य और प्रतीकों प्रभावित करते हैं।

वह रूपकाला ने लिखा है कि प्रतीक रूपमें प्रभावित प्रतीकों में भिन्नता का कारण है उनकी विभिन्न संस्कृति, जिन्हें अन्तर्गत उस देश के बावर तथा आत्मीक सभ्य परिवर्तनों आ आती है। १०४ भवानी वास्तव कि यदि रूपकाला प्रतीक संस्कृति और परिवर्तनों प्रतीकों का अन्य प्रतीक का प्रयोग करता है तो दृष्टि पैदा करती है जो क्ला की गौरव को दस पहुँचाती है। क्ला के प्रतीक, संस्कार और परस्पर ते भी
पुभावित होते हैं। इन दोनों से इनका प्रतीत व्यवस्था होता है।
प्रतीकों का अपना अन्तरिक व्यवस्था होता है। प्रतीकों में जो प्रतीय भाव
वोटन की श्रमल होती है वह संकेत है कि वार्ता ही उनसे बंधा होती है।
यह श्रमल जब तक वही रहती है तब तक तो ये ढील रहते हैं जिन्हें भाव वोटक
के स्वान पर जब वे स्वयं भाव तथा स्वान प्रभाव करते हैं, उसे समय उनका प्रतीकत्व
नहीं हो जाता है। काव्य में प्रतीक होने वाले प्रतीक तो ये होते है जिनका
व्यवस्था युग प्रतीक होते है। उस वाण के बाह्य वे अर्थ देता रहता रहते
हैं, जब त्यो अर्थ में निरूपित-अस्तित तो वापस है। युगपत, अर्थ, बाप, बाप,
प्रतीक के लथ में दायवाद में बहुत प्रभाव में आवे। वे अनन्तवाद में, शैख
परिवतन का ठूलाश्व सूत्र देते ये।
धार्मि, वैधानिक, धार्मिक प्रतीक ग्राम: सरल देते ये।
विन्य
क्लासिक प्रतीकों के साथ ये संतत साध है। वे स्वयं प्रतीक की दृष्टि और लोग से अनुपस्थ रहती है। क्लास के प्रतीकों का अर्थ प्रतीक अर्थ
निरस्त नहीं होता और वे की धार्मिक अर्थ ही अर्थ देते ये वाले ही होते
हैं जबकि विभाजन को शास्त्राध्य वे प्रतीक निरस्त अर्थात देते हैं।
क्लास के प्रतीक क्लासिक अर्थ होते है। धार्मि लक्ष की जिस संख्या से वे
दृष्टि होते हैं तो वह उसे के सामने संभवता प्रभाव में बैठा करने की
कोशिश करते हैं। यही कारण तो फिर उस के प्रतीक भावोत्तेजक होते हैं अर्थात
विभाजन इस्तेमाल के प्रतीक भावोत्तेजक सूत्र प्रकार था के प्रतीक और क्लासि
क्लासिकों में भी विभाजन होती है। धार्मि के प्रतीक क्लासिक प्रतीकों के सामने
भाव-संभाव तथा संभवत न होकर आस्था, प्रशासन व भावना तथा पत्रिपालित
होते हैं। कला के पूर्तिक क्षेत्र कल्पना प्रथ्यान द्वारा होते हैं वहीं पर ध्यान के पूर्तिक विश्वसनीय विनिमय प्रथ्यान।

इसका तत्त्व यह वह नहीं समझा गया है कि ध्यान, प्रथ्यान आदि क्षेत्रों के पूर्तिक क्षेत्र के लिए सर्वमात्र अल्प तथा अवरोध होते हैं। इन क्षेत्रों में की तुलना से पारा जाता है जो भावोद्वृत्ति की क्षमता से पूर्ण कल्पना को बाध्य रहने वाले होते हैं। इन पूर्तिक क्षेत्र के लिए ग्रहणीय होते हैं। प्रथ्यान कला यथा झटपट तथा तथा इन क्षेत्रों के श्रेणी रूप पूर्तिकों को लेकर अपनी प्रतिमा के बन पर वातावरण के अनुसार नहीं सकता है। इन पूर्तिक अन्य पूर्तिकों की अपेक्षा व्याकरण सबक ही सकते हैं।

एवंतत्त्व में हम इसे कल्पना की अपेक्षा पूर्तिकों का अधिक महत्व होता है। विशेष त्याँ क्षेत्र का यह अपनी भावनाओं को अभिवृत्त करने का एक मान साधन भाषा होती है। भाषा का विवरण शब्दों से होता है। लेकर रास्ता पूर्ण शब्दों के मुख्य में ही पूर्तिक हैं।१०२ दौरान कालीन प्रयोग से शब्द कब पूरे हो जाते हैं, हो तुल्य: उनमें जान अलगी होती है। इस कर्म में पूर्तिकों की पवित्रता भूमिका होती है। साहित्यकार उनकी यथा अर्थ सिद्ध का पूर्तिक परमात्मा उनके धृत: जोड़ता उत्तरता है।

साहित्य के सभी लघु में पूर्तिकों का प्रयोग मिलता है, किंतु काय्य के लिए ये व्याख्या महत्त्व पूर्ण है। ये उसे हिंदी नेत्रवत है। ये बख़्सी क्षेत्र तथा ध्यान द्वारा है।१०३ पूर्तिकों के रास्ता प्रयोग से ही काय्य के जीवन रही होती है। कौंता तैयर अर्थवती भाषा की मांग करती है और पूर्तिक, विश्वा, भाषा की अर्थमान रूप रूढ़ित सम्पन्न बनाते
है, यही कारण है कि कीवता में साधित तब अन्य स्पष्टतः अभियोगिता की उपर्युक्तता बढ़ जाती है। इसी तरह, कीवता के ग्राम्य के रूपालक ग्राम्य से युद्ध जीवन सत्यों को उर्मागर दर्शन की कोशिश करता है। युद्ध सत्य का अन्तर्वह और अभियोगिता प्रतीकों के दृश्य ही समय है, क्योंकि जो भाव अभियोगिता में सीधी अभियोगिता नहीं समझती वह ब्रम्हस्त करने या प्रचुरता करने के लिए प्रतीक काम करते हैं।

109 प्रतीक कीवता और पालक कीवता के बीच बताया का काम करते हैं। इस दृष्टि में आता है कि यह साधित तब अभियोगिता और साधित अभियोगिता और अभियोगिता के संपर्क द्वारा भी अभियोगिता का काम करते हैं। इसे केवल साधित तब और अभियोगिता में संबंध ही है। इसका प्रभाव द्वारा साधित अभियोगिता का काम करता है।

परम्परा में यह प्रतीक के पोज बदलते ही धीरे-धीरे समय साधनों का उचितप्रकट बनाया गया है। संस्कृत की कार्यवाही तथा है, जहां प्रतीक के साथ भीति के रूप में अभियोगिता में और किसी ने तारीहुत में पछले नई और साधनों साधित एक तरह प्रत्येक रहा। यही कारण है कि रूपक-राशि में प्रतीक सबसे मध्य है।

लोक कायम और लोक साधण में अधिक 105 कहने का नात्य है, कि कीवता में प्रतीकों का प्रयोग स्पष्ट कीवता के लिए ही संगत है। पेशेवर प्रतीकों के प्रयोग में अभियोगिता नहीं होना बाबुड़ा । इन प्रयोगों में साधारणीय वर्तमान दापेड़ । कभी-कभी प्रयोग देखने में आता है कि प्रतीक के पहले की कीवता द्रुत हो जाती है और साधन का न प्रतीक है। जनजीवन की ध्रुव आंतरिक सीधनाएं
परिषय हो पाता है और न ही तामान्य सोक बीवन है। उसा तभी होता है कब सरनाकार प्रतीक को ही इछा मान लेता है। प्रतीक भनी इच्छा नहीं होते, वे बोध के तानन होते हैं। दूसरी बात, प्रतीक उस समय भी दूसर बन बाता है, कब उनमें अल्पना निवेशन का छोर पैदा हो जाता है। यह निवेशन सरनाकार के वैज्ञानिक आंकुशों के कारण पैदा होता है, ज्याँलिंग पिठ तरह की आपक सत्य को पहले निजी करके देखता है और इसके साधारण बनाता है यूनी ही प्रतीकों के साथ भी होना चाहिए।

पूर्वोक पृथ्वी में सार्थकार को अपने समय व समाज के द्वारा प्रतीक शिल्प विविध के प्रकार के लय में नए प्रतीक भी चिह्नित करने पड़ते हैं, तभी वह अपने पृथ्वी को सही परिस्थितियों के साथ सार्थकता में समेट पाता है तथा पृथ्वी सत्य को पकड़ पाता है। जब तक कि यह प्रथम नहीं है कि "पूर्वोक स्थल शाही सार्थकता प्रतीकों", जो प्रतीकों को मूर्तिकर्म करता है और वह वैसा करना चाहता पर रहेगा है कब ज्यो हो जाता है कब वैसा करना चाहता है। इसने प्रतीकों पर ही निन्दा करने लगता है। 105 पूर्वोक प्रतीकों तो नहीं है पृथ्वी के सत्य को पकड़ना या अनूठियों को ले जाता है वे जो बुखार को लेते है उसे आज के ज्ञान में हायी पर पढ़कर गुड़ करते हैं जीत की शाफत करता है। लिंकिंग यह परिस्थित में नभावना प्रतीक के लिए नहीं, बल्क शार्कला है लिए होना चाहिए।

प्रतीक निर्माण की प्रतिष्ठा काव्य-सरना-प्रतिष्ठा का एक अंग होता है। ज्यांलिंग काव्य सरना प्रतिष्ठा के दौरान किंतु किस निवासियों ने अनुपत्त होकर अपनी अनुसृति को ज्ञात-बढ़ करता है, प्रतीकों के प्रयोग में भी नीच
अनुच्छेद लघु ते उसी वैज्ञानिक सूचित से अनुमोदित होता है। इतरतः प्रतिक विचार धाराओं ते भी प्रभावित होते हैं। यही कारण है कि दो विचारधाराओं ते तत्व अनुसार स्थितियाँ लगातार दरा प्रयोग प्रतीक वातावरण में लगातार देखा तथा भी आर्थिक लघु ते अन्य स्थितियों के स्तर पर रहने होते हैं। उदाहरणस्वरूप, वाद एक ही प्रतीक प्रतीक का प्रयोग लोक-लघु वर्तमान विचारधाराओं ते अनुसार स्थितियों होती है जो प्रयोग का प्रतीक वहाँ लोक-लघु स्वरूप के प्रयोग स्थिति अभिव्यक्ति के किसी तरह के विचारधाराओं ते स्थिर लघु ते उसके विचारधाराओं परीक्षण का अभिव्यक्ति होगा।

इस समीक्षक यह प्रतीक निर्माण की प्रौद्योगिक से विचार से ब्रोकर लघु है कि जब प्रौद्योगिक तथा स्वरूप स्वरूप के प्रणय: दुन्या से विदेशी विचारधारा ते विनियूत निर्माण हो जाते हैं, तब आप के मानव निर्माण का निर्माण होता है। 107 लेकिन यह नहीं समझ लेना पारंपरिक कि स्वतन्त्र लघु से प्रतीकों का निर्माण नहीं हो सकता या बिने बन गई हैं तो वाद में विचार प्रतीक बन सकते हैं। वाद तात्विकता से देखा वाद तो दोनों का धार्मिक एक ही है। दोनों अभिव्यक्ति के ही तात्विक है। "विचार" से भाव-प्रतीक का निर्माण होता है और प्रतीक भाव प्रतीक के स्तर पर संक्षिप्त होते हैं। 108 प्रतीक निर्माण जन एक हैं।

प्रतीकों के परमाणुप्रतीक लघु से प्राप्त होते हैं, इसके अलावा संस्कृति, विश्वास मनोविवेक, उपनिषद, वर्तमान, लोक-वीण इत्यादि के से भी प्रतीक श्रृंखला विचार होते हैं।
विज्ञान हमारे जीवन का इत्तेज बन गया है, इसलिए विज्ञान के केंद्रों के प्रतीतिकश करना आज के जीवन की अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक है। क्योंकि इसे दिन दिन प्रतिविद्या-ज्ञान-विज्ञान की शाखाएँ-प्रशासिकाओं का विकास होता जा रहा है और हमारे पास बीतने के बहुत सारे साधन बनते जा रहे हैं, क्योंकि हम जीवन भी रहस्यमय और समस्या ग्रस्त होता जा रहा है। साड़ी इस मनुष्य का व्यक्तित्व भी रचीरित होता जा रहा है। स्वयंचार के सामने इसी जीवन और व्यक्ति को निर्णय करने की समस्या है। इसके लिए विज्ञान की सहायता परमावर्तक है। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि जगत दूरी का बेहतर भी विशिष्ट हो गया है, इस कारण सही पृथ्वी की समस्याओं के समाधान का राह है। इसलिए कम वहीं अन्य भारतीय संस्कृतियों के प्रतीकों का उपयोग भी करें तो दुरा नहीं है, सारा ही है, तो हम इस तथ्य पर भी विचार करना चाहिए कि तकनीकी लोक में संपर्क होने वाले ही हैं, उत्तर: हमें अन्य अधिकांश प्रतीकों की तोला लोक जीवन से ही करनी परिभाषित। इसे क्विता के साथार, सार्वजनिकता और वैष्णव आत्म तथा दृष्टिकोण रहें और चितवन अन्न की आधार सेवा करनी।

इत्यादि

छवि कौतूहल का एक अभिन्न आंध्र माना जाता रहा है। बहा जाता है क्योंकि वहीं विश्व और प्रतीक कौतूहल में रूप रखते हैं, तो छवि उसे नाद और दृष्टि का सम्मेलन उत्पन्न करते हैं। बहा जाता है क्योंकि छवि कौतूहल के चरण
है, चन्द्र पादों ० वेदस्य लेखिकावास्तव में वे कौनता के पद निकेष है, जिन्होंने कौनता न केवल लक्षण करती है वरन घनक्षी और नये आयतो, शीर्षमानों के और गतियों को दुरितकरती है।१०९ छंद कौनता को लोकवर बनाता है, उसके आर्कर्ष पैदा कराते, उसको र्याक्षित्य प्रदान करता है। इतना ही नहीं, वह पान और अद्ध को सुषिक्त करता है तथा पान और कौनता के वीष सेभ का काम करता है। वह कौनता को शारिरिका के अन्य व्यं ते अला कर विशिष्टता भी प्रदान करता है। इतनी कारण काव्य शारस्त्रों के मध्य छंदों की पूर्व का कुछ ही है। भारतीय शारस्त्र में छंदों पर लिखी प्रतिकों की गणना दे हो मरी पूरी प्रतिक तैयार हो सकती है। छंद की इतनी सुन्दरी और वायुक रसपरास वे देखकर इतना वात से ईश्वर नहीं दिखा वा चक्त कि इनका संबंध मनुष्य के अंतर्गत में है। हमारे यहाँ प्राणों ने लेखिका में छंद को सा 'सलापन्नारिसि, प्राण प्राण को उदलारिसि, युन्नुया का तेज उपक्रमों वोर उन्नारिसि' इत्यादि कहा गया है। इतना तत्त्व यह है कि छंद का हृदय केवल बाल्य रसपर नहीं है, वर्षक उसका निर्माण और मेल हमारे शरीर के उन आलोक के -बनाओ से हो जाते हैं। याद निभावली होती है तथा हमें संसर ने देखकर सुख देने की दृष्टि मिलती है। अन्य अधिक पूर्वक "प्रशिक्षक अफिटरोरो फ्रीटीज्यम" में आसो ५० रिक्वेंट ने लिखा है कि "छंद दिया हमारे शरीर में व्याप्त धन्य उत्सुक नाई का स्थान है। यह हमारे मन के दौरों में दिलता हुआ उत्सुक ना का ज्यादा उत्सुकजन करता है।११० रिक्वेंट के इस विचार से छंद के उस रुप का भी भिन्नता होता है, जिसके तहत तत्त्वाकार संसार में भेदता है एवं यहाँ से प्राप्त अनुभवों
को प्रवेश वर्ग प्रभावकारी स्पदन करता है तथा पिकिंग निज़त आता ही पाठक स्वयं था भावलोक की तरफ अपने सम्बूच्छ पेटना के साथ अख्तर होने समाप्त है । हम्द असर से जोड़ने वाली कौता की बादर भर नहीं है, बल्कि यह भी स्वयं प्रीज्मा का अनिवार्य अंग है, बादर से गुजर कर ही कोई भवनना ता अनुप्रदृष्ट स्वयं का स्पदन करती है । बादर स्वयं पर देख से अपने बुद्धिमा निवेश बाबुरा स्वयं प्रीज्मा में स्वीनुनाथ गार्ड ने लिखा है कि स्वयं आलोक तरंग है, स्वयं शाखा तरंग है, स्वयं राज्य तरंग है, स्वयं रसायन तरंग है, स्वयं ही विविध तरंग है । हम देखे हैं कि स्वयं, परस्पर से कौता का अनिवार्य अंग माना जाता रहता है ।

भारतीय ताराखंड में धारा का प्रयोग वैदिक काल से ही होता आ रहा है । किंतु वैदिक वृत्त इस तथ्य को भित्र क्षितित जाते ये कि सभी गंगा का अन्यत्र विभिन्न समय में प्राप्त अनुभवों का सा तथा आर सकान नहीं होता । ये सभी प्रौद्योगिक स्वयं स्वयं में विभिन्न होते हैं । इसलिए सबको एक ही नियम सर्जन में बांधना उनको अरुक्कु बनाना होगा । आँ सबका स्वतंत्र तरंग के निम्न होना हो क्या क्या होगा । यही कारण है कि धारा में स्वतंत्र खंडाधार पर स्वयं आवश्यक है । धाराओं के बाब सबों से स्वतंत्र आधार नियम का स्पदन पक्ष हो जाता है, लेकिन उनकी उतनी हदता नहीं आयो । फिर ताराखंड के विकास क्रम में लोगों की प्रौद्योगिक आवश्यक प्राप्ति को गई, फलतः परस्पर से प्राप्त धाराओं में स्वयं का आने लगा । आगे चलकर तो ताराखंड में दो विभाग हो गये । एक विभाग पूरा स्वयं करता था खंडाधार आकार नियम जब तक नियमन गृह रहा, तब तक ताराखंड में कोई गुजरो फिर भाई नहीं हो किंतु
नियमन के प्रधान होते ही साहित्य पर उत्तर प्रभाव पड़नेला। छन्दों के प्रयोग की परम्परा सूद हो गई। इतने प्रभाव से संस्कृत साहित्य को उतना ज्ञान नहीं पहुँचा, बिना हिन्दी साहित्य को। साहित्य में भाषा का साहित्य अनुसरण नहीं देता बा, बिना हिन्दी के नाम पर। परिणामः काव्य साहित्य अपने उद्देश्य से पड़ता होने लगा। छन्दों की सूद परम्परा का ही प्रभाव है र उत्तर मध्य कालिन की गर्मी नहीं हो पाये। हिन्दी काव्य के आधुनिक युग में भी कहाँ कहाँ इसी प्रकार को हिंसित बने रहे है। दो साहित्यवादी शब्द के विषय में बहुत संधा है। इन्हीं परम्परा से प्राप्त विवाहन को भी पूर्वक र्मक्कर नहीं डिखा। इनके प्राकृत परम्परा के प्राप्त माध्यम से उन्होंने जीवन को धाराय में पसा जा सकता है और न है ते प्राप्त अवसरों को ताकथी पूर्ण अभ्यासित प्रधान हो जा सकते है, क्योंकि परम्परा से प्राप्त माध्यम एक ता अपना अर्थ को इसके होते है दूसरे उन्हें गति मध्य में हवाओं पर बढ़ता घर कर आती है।

छन्द के सूद-बन्ध के कारण जहां काव्य अपने ग्रंथ को सही भुगता, वहाँ छन्द की विश्वसनीय बनाकर रहने के तिस से अनाजथक शब्द भी भर रहे चढ़ा है अथवा फिर भाव की गांठ के प्राकृतिक वर्णों को इसका या दौर बनाना पड़ता है अथवा व्यवहार का बदलतारो वर्णों पड़ते है।

उदाहरण साधू साधू को इन पंडितों को देखा जा लक्ष्यता है --
कौमल रिकाल के अंतर्गत में

नन्दी कोल्हा व्याप्तिरूपी कौमल उपाधि के धारणकर्ता तथा

दीपक के स्वर में विश्वासी-तीर्थ

इन पार परिवर्त्तों में "कौमल" "नन्दी", "धारणकर्ता का प्रयोग

न करने पर भी कौमलीय भाव को सबलता से स्वरूपित किया गया सकता था।

इससे सौंदर्यदीपक में संगमर्यादा का भी समाधेश हो जाता, लेकिन कौमल चन्द्र के

बनाये रखने के लिए अक्षयता को विशेष लघुत्व विशेषता है। उनका मानना है विवेक के स्वरुप बाधाहीत्तरण

या हृदय कुछ लायक और कठिन मानाएँ का चकोररा नहीं है, अपना वह कौमल

का संगमर्यादा का स्वरूप तत्व है जो बाध्य और आत्मत्व दोनों स्तरों पर स्वाभाविक रूप से

गौतम तक है। इन दोनों स्तरों पर गौतम धर्म के लघु-अस्थायीकृत

है, अपना वे तो ही उद्देश्य को प्राप्ति के प्रयास है।

चन्द्र का बाध्य-भाव-स्वरूप या व्यःक्तिव-अस्वहंसित पर निर्भर करता

है और आत्महृदय स्थल लगा पर। इसी क्षेत्र में चन्द्र और भाव के अस्वरूपित

सम्बन्ध का व्यापक स्थल स्पष्ट होता है। नवीन विश्वास के आधार पर चन्द्र
कीयता की आन्तरिक लय को पुनः करने का माध्यम है न कि उसे बाह्यकर निषिद्ध बनाने प्राप्ति बनना। अन्तः लय उस लय तक पहुँचना है जो कीयतकी प्रेममयता और उसके सामाजिकरण की समया का करती है। छन्द क्षैति में तहायता करता है। क्षणों से जो विद्यमान लय में कोई परिवर्तन भी करना पड़े तो वह करता है बीप उसके तत्काल मैशिकें भेजाता क्षैति उद्देश्य से करता है। अतः वास्तविक उद्देश्य है, कीयता के भीतर की लय का स्पर्श। उर्वर मितार कीयत्रों के अथात्तर यही लय कीयता का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। क्योंकि मानते हैं कि "लय का केवल लय हृदय को झड़ने के समान होता है। तद्वारा कल्याण में वह अविश्वास हो रहता है। तनाव की अवस्थाओं में हो ह्रास अपने हृदय की धरके हुनुम है, उत्तर हुन पहुँचा हो तनाव के होने का कारण है। कल्याण में भी तनाव जो अवस्था में ह्रास हुसर को उठाता है। न नाटकीय शीत का अवशेष हो बुधवा देती है, दूसरों शीर्षने अवस्था जलना अवश्य होना या दूषण आप उसम उसका रक्षण नहीं, अपनी शीतल का उपयोग है। छन्द क्षण एवं लय के आन्तरिक समर्थन का धोखन करता है।

एक आयुक्तार्थिक अवनिवार्यता के यहॉर दिखाए में पुनः पुनः प्रयोग की पवित्र प्रारम्भ इसी थी। इस दृष्टि का तात्पर्य लिखते हैं बैठे है छन्द का वाक्यकार नहीं था, बौद्ध भावना सदा अमूल्य के अमूल्य द्वारा छन्द का निर्माण था। निरला ने स्पष्ट लिखा है कि उन्नों को पुष्टिकर्म के संबंध है दुःखवा पहुँचा है, और कीयता को दुःख उन्नों के पवित्र के अलग हो जाता है।

छन्दों के शारण से अलग हो जाने से निरला का सीता जहाँ पर छन्दों के रूप अनुमान को त्यागत मानने का तरक है वहीं पर भावामूल छन्द निर्माण की ओर भी है।
क्र प्रकार कविता की प्रश्न रिपोर्ट और छंद तथा लय के मद्दत
विद्वान सम्बन्धि के दो यह हैं - एक यह, कि प्रक्षेपण मान्यता के अनुसार
छंद कविता का अनुसार कार्य गणना जाता है, किस कारण लय नैन हो
जाती है और दूसरा यह, कि नये दृष्टि कोष के आधार पर छंद कविता
की भूमि आवश्यकता के अनुसार प्रक्षेपण होने के लिए बाध्य है, क्योंकि अत्यन्त
उपन्यास काव्य की अन्तर्देशीयता को विषयक-व्याख्या और सुन्दरता देना
है। ज्ञ दृष्टि के अनुसार लय अनेक महत्त्वपूर्ण है।

शिल्प प्रियक के छंद और लय के महत्त्व को नकारात्मक संबंध नहीं है।
इतना कारण है कि प्रक्षेपण आवश्यकता के अनुसार छंद परम्परा अथवा पुरातन
केवल व्याख्या वा युगानी रूप, शारीर के अलग-अलग व्यंग्य नहीं हैं! इसका
हीन छंद व्याख्या और दूसरा लय वैदिक काव्य शिल्प है उसे रखचू है।

अनुरूप विधान:

अनुरूप विधान मो ही प्रक्षेपण काव्य धार्मिक भाषा में "अन्तर"
होते हैं। अन्तर को दृष्टिविचित्र "अलम" धातु से है, किंतु अर्थ है "अनूठा"
अत: साधारण लय से कहा जा सकता है जो पूरी तरह बदलने वाले उपाय में ही
अन्तर है। लेकिन भारतीय काव्य शास्त्र में इसके अर्थ में प्रयोग हुआ
है। "क्वीयूट करनेवाला या वह जिसे क्वीयूट किया जाता है। इन दोनों
अर्थों में बोधा अन्तर है। यद्यपि अर्थ में अलग अलग अर्थ है, वह अर्थ के अन्तर को करता या विधान दृष्टि
केवल करता है, वह अर्थ अर्थ में वह वाहन गाम रह जाता है। ११७ भारतीय
काव्य शास्त्र में अलंकारों को हेलर काली विचार-विचार हुआ है। उपर जो को
अर्थ बताए गए हैं, अर्कार विद्वान रियाताओं में उन दोनों दी जर्मन में प्रमुख हुआ है। प्राथमिक भारतीय लोहित शास्त्र में इन दो अर्थों के आधार पर विवाद रो दो अर्थ बन गये। प्रथम अर्थ को अर्कारयादी और दूसरे अर्थ को साहित्य या ध्वनि यादी कहते हैं। इन दोनों अर्थों में उपनी उपनी विस्तार से अर्कार को परिषमानित किया गया है।

अर्कार को काश्य का कर्त्ता या विधायक तत्व मानने वालों में भाषाओं, दण्डी, स्वर, तथ्य, क्षेदेव, अपण दीर्घ उदमत अधिक का नाम प्रमुख स्थल से लिखा गया है। भाषाओं में अपने काश्यार्थक नाम शंका में अर्कार का परिषमानित करते हुए लिखा है कि "वृजिंमध्यान्योनि लिंगायाचार्यामालवस्ति:" अर्थात् श्लोकः और अर्थ का प्रदर्शन को अर्कार है। वे उनमें में अपने करते हैं कि न श्लोकः निश्चित विशिष्ट विशिष्ट विलिका द्वारा अर्थात् अंतर्गत पाये विशिष्ट भी पुनःपुनः हो किन्तु विश्व प्रकार विश्व असाध्य के वह पुनःपुनः पुनर्जोड़ करते हैं। उसी प्रकार विश्वतता पाये विशिष्ट भी साध्य को, लेखिक अर्कार के आधार में वह हीनकंठीय हो रही हो। इसी प्रमाण को आप सुनते हुए कर्मों में ख्या वर्ण में विलिका है कि "काश्याः पार्थक एवार्थार्थमन्नास्ति। अर्कार अर्थ के हीनकंठीय कारक वर्णों को अर्कार करते हैं। व्यापन ने अर्कार को परिषमानित करते हुए लिखा है कि -"काश्य क्षेत्र मानकार्य वाच कीकंठायेकार अर्थार्थ कोई भी सर्वोपरि अर्कार के आधार याद्य कर्तारों है और अर्कार हीनकंठीय का द्वारा नाम है। स्वर ने काश्यार्थक में कहा है कि "अभिधानानुसार विवेक वर्ण वालकारः अर्थात् विलिका वर्ण के वृजिन्त दूसरे पुनःपुनः करते हैं। यद्यालोक के रघुक्ता आदेव के महाभारत उंगो सर्वत्र हिंदू क: काश्य
मामल, लूट तवने अल्कार को ही एक धर्मन ते वाक्य का मूल तत्त्व माना है।
इस मत के एक आचार्य ने तो यहाँ तक कह दिया कि "अल्कारों ही प्रियसी"।
आचार्य उदमत ने भावार्थन वो भी अल्कार में समृद्ध रहा है। इसके लिए
उन्होंने समाहित होकर ऊँची वा नात्य क्षेत्र की पौर
सन्त्याग, वैषाल सन्त्याग, कौक्षी इत्यादि यथार्थतयाग की भी अल्कारों का
ध्वनि व्यस्त है। रितियाली और वंद्यियाली आचार्य के तत्त्व के सम्बन्ध है।
इन्होंने सं-सन्त्याग, धर्म-सन्त्याग सबकी मदद सार्वभौम अल्कारों के ही अन्तर्गत
माना है। इन्होंने सा, भाव और भावान्वयन के अल्कार संग
क्रम: सर्वत्र अल्कार द उद्वर्त अल्कार के नाम से इनका वर्णन दिया है।

लूटे के सिद्धातों की परिसमाप्तों से स्पष्ट शलकता है कि उने
गत में अल्कार वाक्य का संस्कार न होकर सत्ता उपदासन है, किन्तु
संयोग-सुयोग से वाक्य के संस्कृत में ब्रूढ़त होती है। उनके अनुसार अल्कार
सा-भाव आदि के सहायक उपदासन के त्रिविषाण ध्वनि है।

संस्कृत की अल्कार विधान की परम्परा हिंदु में भी अबाद गति से
पती है। आधुनिक युग में विधान करने वालों में दूरारो दोन, भावान्वयन
अतिकर, केदार राय, वादेवलाल प्रोकर, रामदेव फिरोज, बाधु कोन्ना आदि
का नामांकित का संक्षिप्त है। आचार्य रामचन्द्र बसु ने भी यह-तत्त्व इस प्रकार
पर विचार किया है। इनके अनुसार वस्तु या व्यापार की भावना चटकिती
करने और भाव को अधिक उत्तर्क पर पहुँचने के लिए कभी ऐसी वस्तु का
आपका या गुण बहुत बढ़ा कर विवाह ना पड़ता है। कभी उसके रंग, कभी या गुण को भावना को, उस प्रकार के और रंग, कभी या बीता करने के लिए समान रंग और धर्म वाली मूल अंतर्गत का सामने करना पड़ता है। कभी-कभी बात को दृष्टा-दरीक्षा भी करना पड़ता है। इस तरह के भी विवाह और व्यापार के रूप उत्तराय होता है। हम देखते हैं कि बुझत की भी मत भी ध्वनिवादी व साधारण आधार तक ही मेल आता है। इनके अलावा भी वह कहने का टूट मात्र है। भावनाओं की तीन उद्देश्य के लिए इनका प्रयोग किया जाता है।
भी उत्कृष्ट को याद ने कार्य में ही वे सहायक होते हैं।

अलंकारों के भेद के संबन्ध में भारतीय आधार दैवीक नहीं मिलता। भागमेक ने कभी भी रंग नहीं, तो वर्ण ने पूर्वतो। उद्यम ने इकाइलिस्ट भेद बताया है, तो लट्ट में पवात। आधार आधार यथार्थ ने उदारीक भेद रिश्ता है। अभिभाजन दीवार तक वह वह इन्होंने संबंध तथा शिक्षा के साधन के पारंपरिक तरीके के अलावा भी अलंकारों के वर्ण कार्य में पीढ़ी-पीढ़ी का बहुत मिलता है, जैसे भारतीय आधार दैवीक द्वारा वर्णित भी अलंकारों को 5. भ्रमण में कर्नित विषय जाता है। इन क्रियाओं के संबंध में आधार में परस्पर योजना योग्य रहता है। जहाँ लट्ट में वार्ता, जीवन अतिकार और शिक्षा, वहाँ क्रियाओं का नाम है, वहाँ स्पष्ट को निरंतरित करते दृष्टिकोण में संबंध है।

1. साधन गर्भ, 2. पिरोग युक्त, 3. इंकलाब क
4. तक, न्याय युक्त, 5. वायु ध्वनि युक्त, 6. तोक, न्याय युक्त, 7. गुणात्मक विश्वास

खूं देखने में आता है कि बाध के सभी प्रमाणों का स्वयं के इस
कारण को स्वीकार किया है।
शब्दालीकरण काय्यम साधितम के अधार पर अलंकार द्वारा रूप ले दो पुकार के होते हैं -- १ं शब्दालीकर, २ं क्रियाकार। गोपिन्द त्रिपुराणवत आदि ने एक तीसरा पुकार भी दुसरा है, उम्मीदेकर। ११८ शब्दालीकरों में अलंकार का साधन देवत श्रद्धा प्रकाश की ध्यान और अर्थ पर आयत्र रहता है, क्योंकि शब्द के बदल देने पर दुसरा हो जाता है। ११९ इन्हें अलंकार अपमान, यमक, धर्मक, वीणा, उपलब्ध प्रकाश, ध्वनि, उपलब्धवादमाता आदि अलंकार आते हैं। आदि अलंकारों का समावेश पूरे ध्वनि के अर्थ से होता है। १२०

इनके अलंकार श्रद्धा रूप से उपग्रह, रूपक, द्वारकानाथ, प्रतिपन्नमा, कल्यो-गिता, दीर्घ, अपहरित, उल्लेख, लघुकवितास्पदित, स्तंभ लेख, प्रतीप आदि अलंकार आते हैं। उम्मीदवार में शब्दाली और अलंकार दोनों शेष के ही प्रयोग प्रथम होते हैं। १२१ इनके संस्रुप और संक्षेप दो भेद होते हैं।

ध्वनि, भ्रम ने अलंकारों का भी हिन्दी में प्राध्यूप रहा है, जिनके बारे में विवरणों की धारणा है कि ये पाठ धारा साधित की देन है।

नामवीरण, धन्यार्थवोरवत, विषय प्रचार आदि से ही अलंकार है।

प्रथम यह है कि ध्वनि विधि के पाठ के रूप में अलंकार की तथा धूपित है। इसके अतिरिक्त के लिए अध्यायों ही अलंकार और अलंकार के संबंध के विधि में प्रस्तुत द्वारकानाथ को देखना कीयत होगा। साधित्य शास्त्रियों ने माना है कि अलंकार के अलंकार सूक्ष्म और प्रस्तुत आदि का रूप है जबकि अलंकार के अलंकार तक का प्रयोग। इस अध्याय यह देते हैं कि अलंकार और अलंकार प्रभावासारी आधिपकीकरण के लिए अनाधिकार रूप से संबंध है, क्योंकि काय्य का भाव-पक्ष और काय-रूप भी उसी रूप में दृढ़ हुआ है। हाँ! क्रियाबंध द्वारा पहल का तम्बन्ध को निर्य तम्बन्ध मानते हैं। १२२ काय्याकाल के बो
अयार्य अलंकारों को काय्य रचना का अध्यक्ष उपकरण मानते रहे हैं, उन तबके महत्व का निर्देश के यह है कि अलंकार काय्य की पुल आत्मा को पुर्वोपचत करते हैं।

शिल्प-विद्विध और अलंकार के सम्बन्ध का एक मनोवैज्ञानिक आधार भी है। शिल्प-विद्विध का पूरा तक्षण है, किये की आत्मा के धार्मिक किन्तु स्तर के अतिकरण करना वह उत्तर कर वह मार्गों और अपना स्वाभाविक प्रयोग से लें। अलंकार इस धारावर्त के निम्नांक में सहायता करते हैं। जहाँ तो आत्मा के पैतृक भाग को साइन्य प्रदान करने का मनोवैज्ञानिक इक्तु अलंकारों के निम्नांक विशेष और प्रयोग का आधार रहता है। आयार्य नहीं जो इसी कारण जन्तु और आयार्य से अविनाशित हो जो समारा अलंकारों के ब्रह्म के स्तर के लिए है। शिक्षा और स्तर को काय्य की अन्तरात्मा बनाने वाला धार्मिक भी शिल्प-विद्विध के महर्षीं घटक के स्तर में अलंकारों की उपेक्षा नहीं करता। क्योंकि जून स्तर से यह माना जाता रहता है कि रस को प्रमाणित बनाने के लिए ब्रह्म-शिल्प-विद्विध आवश्यक है।

उस जग्य में अलंकारों की भूमिका अविनाशित है।

यह माना जा सकता है कि अलंकार भावों के उपर अविनाश होते है।

अविनाश विद्विध भी मानते हैं कि "काय्य के उपाध्यक्ष के स्तर में वह अनुसूचित विश्लेषण एक और किये के अनुभूति का वस्तु प्रकाश का स्पष्टीकरण या तत्प्रेरणा योग्यता प्रदान करता है और दूसरे और इसी तत्प्रेरणा प्रश्न में वह काय्य के साइन्य प्रकाश को या उसकी प्रभावहीनता को उद्घोषित करते हैं। यह रचनाकार के शैल्क कोशल का भी परिश्य देता है।
इतना तब होते हुए भी यह विवाद का विषय होना पारित नहीं कि आलंकारों के प्रयोग के प्रीत, प्रार्थनामें एक दृष्टिकोण अपनाया जाए। यदि तौन्द्रिक की ओपरेशन के लिए काव्य में आलंकारों की बड़ी लगी जाय तो उससे रचना का आर्थिक तौन्द्रिक उच्च-विक्ष्मा हो वायुग्रेश। इतना ही नहीं उससे कव्य-भाषा के स्पर्श पर भी प्रभाव पड़ेगा। इस दृष्टि से आलंकारों का प्रयोग सायात लिए जाने का समर्पित नहीं किया जा सकता। उनका प्रयोग वहाँ तक स्योकार्य है जहाँ तक वे वाणो को विवादों की समर्थ बाहिता बनाने में तह्योग है।
लिखित : 

1. कॉलिन्स कन्ट्राइंज डिक्शनरी ऑफ़ इंग्लिश लेबेल, पृ 7722
2. रेनडम हाउस डिक्शनरी, पृ 1348
3. वेब्स्टर कॉलेजियल डिक्शनरी, पृ 1188
4. मोनिका मिलियम्स संस्कृत-अंग्रेजी डिक्शनरी, पृ 1073
5. द रेड्डीक्स संस्कृत-अंग्रेजी डिक्शनरी, पृ 556
6. मानक हिंदी कोश - पागवां भंड सं रामचंद्र वर्म्भ, पृ 173
7. सरस्वति हिंदी शब्द सार - सं रामचंद्र वर्म्भ, पृ 925
8. हिंदी-अंग्रेजी कोश, टॉम हर्ट्सवर्थ, पृ 150
9. वेब्स्टर हिंदी-अंग्रेजी कोश, पृ 1393
10. बूहत हिंदी कोश, पृ 1334
11. आर्थ वॉर्ल्ड, पोलिटिकल प्रोजेक्ट, पृ 226
12. कार्य आय मुख्य, पृ 9
13. डॉ. प्रमिला शुकल - आधवाद का राजनीतिक, पृ 35
14. डॉ. मोहन अद्वी - आधुनिक हिंदी काल्पनिक विश्लेषण, पृ 6
15. डॉ. पुडुक्कौटी दल भार्म - आधुनिक राज्य रूप और विश्लेषण, पृ 6
16. डॉ. विकस सिंह, वारा विश्लेषण लघु के पृ 160 पर उपज
17. डॉ. सत्यानाथ सिंह - श्रीमद्भगवद्गीता उपनामों की विश्लेषण, पृ 112
18. कलाश वाजपेयी - आधुनिक हिंदी कविता में विश्लेषण, पृ 19
19. डॉ. ब्राह्मण सिंह, हिंदी के आधुनिक उपनामों की विश्लेषण, पृ 3
20. डॉ. कलाश वाजपेयी - आधुनिक हिंदी कविता में विश्लेषण, पृ 19
21. डॉ उमाकान्त सुपत - नवी कविता के प्रवचन काव्य : शिल्प और जीवन
प्रियान, पृ 170

22. मिलिस्टन मरी - द प्राकृतम अफ स्टाइल, पृ 5

23. डॉ वाहर सिंह - जिक्री के आर्थिक उपयोग की शिल्प सीमाए, पृ 10

24. डा षार्ट्लाइट दू स्टाइल, पृ 1

25. डा प्राकृत अफ स्टाइल, पृ 3

26. रायर्स पेन वारेन - क्रान्ती-रत्न अफ गृह गृह, पृ 438

27. डॉ गोपिकंद निक्कोलाय - शास्त्रीय समीक्षा के निकट, पृ 98

28. मिलिस्टन मरी - द प्राकृतम अफ स्टाइल, पृ 4

29. डॉ वाहर सिंह, साहित्य के उप पृ 162

30. शेष स्वरूप - सेंस अफ गृह, पृ 69

31. डॉ वाहर सिंह - तत्काल, प्रेक्षा, पृ 111

32. आदि रामपाल शुक्ल - प्रसंगिक भाग-1, पृ 1

33. डॉ वाहर सिंह टारा का लेखन प्रेक्षा के , पृ 111 पर उपसंहार

34. पोर्ट्रेट दृश्य, पृ 118

35. मार्ग स्वरूप, भाग-1, पृ 26

36. वही भाग-4, पृ 163

37. भजकलोग समावली, टीडी डॉ नरेन्द्र जैन, भाग-1, पृ 54

38. डॉ दुर्गाप्रतार तारामणि के कीम - काव्य शिल्प के मान, पृ 20

39. रामपाल शुक्ल प्रसंगिक भाग-1, पृ 138

40. प्रेमस्वरूप - तेलमेंट स्व दिस्कवरी पर्सिपिलेट आन प्रियान, पृ 200
41. चलिते & सिम्योंमतियम, पृ 93-94
42. श्रेमवन्द* विवार, पृ 76
43. रामचन्द्र शुल्क, विन्तामण्ड भाग - 1, पृ 132
44. डॉ* हरदारीलाल शर्मा – तौन्द्रिक शास्त्र, पृ 10
45. डॉ* राम विलास शर्मा – लोक बोधन और साहित्य, पृ 15
46. यही, पृ 15
47. बाबा बुलवान – इंटरव्यूम द्वारा गोलियार कोमेटदास, पृ 9
48. हरी रामवर्त्तु शिवंतेर – भाव और सेवन
49. प्रभास क्रोङ्ग्विय – कविता दो तीसरे अंश, पृ 17
50. यही, दो, स्तो इलित के विवार, पृ 17
51. रामजन्मवर्त्तु दो, भाव और सेवन, पृ 17
52. यही, पृ 15
53. ले० गुरुलाल शास्त्री लेखिक सिंवाल रुन वोइल, पृ 51-52
54. टूलिया, व्युक्ति वीरिया, पृ 177
55. यद वर्षव शास्त्र लोक विवार अद, ।
      नहूँ व वर्षव वादादे लोक कायमित समुित: !
      नोह गुरुलाल वाणड़ा उपवास दारा नोह गुरुलाल व्युक्ति वीरिया विलिया, 1955, पृ 34
56. रामजन्म व्यूह जीवंत, अध्यात्मिक कवि, पृ 32
57. दो, स्तो इलित, दि राज्यिक आफ धार्मिक आनंदशिक्षा मंड़ पोश्त्र संस्करण, पृ 31.
56. डॉ० नियाराम दिवारी, साहित्य शास्त्र और काव्य भाषा, पृ 158
59. वही, पृ 159
60. वर्ग लिटरेशी टर्म्स - ए. रुकान, पृ 239
61. दिग्विजय अय्य वर्ग लिटरेशी, साहित्यिक, फाम्स एंड टेक्निक, जोसफ टल, सिलेबस 233
62. डॉ० शिव शंकर - गवानन गार्ड, ग्रंथविद्या का साहित्यिक एक अवस्थित, पृ 242
63. हिन्दी साहित्य कोश, पृ 205
54. डॉ० रामचरिण गिल्ला - काव्य पर्यावरण, पृ 32
55. डॉ० नोनु - काव्य में उद्देश्त तत्व, पृ 89 काल, पृ 10
66. आयार रामचंद्र शुक्ल - प्रति दिन विश्व भाग-1, पृ 242
67. कुमार विनेश - साहित्य शास्त्र के तत्त्व, पृ 166
68. वही, पृ 150
69. वही, पृ 160
70. तो० डॉ० लेबिस, वि पॉटेटिक इवेल, पृ 18
71. वही, पृ 19
72. डॉ० नोनु, काव्य रियल इंडलो 19678, पृ 61
73. डॉ० सिकाराम दिवारी, साहित्यिक शास्त्र और काव्य भाषा, पृ 160
74. कुमार विनेश - साहित्यिक शास्त्र के तत्त्व, पृ 117
75. डॉ० सिकाराम दिवारी - साहित्यिक शास्त्र और काव्य भाषा, पृ 061
76. डॉ० शंकर - वि पॉटेटिक इवेल, पृ 25
77. लिटरेशी संस्कृत अथ राजा पाऑड, पृ 17
70. डॉ शार दिमल - सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, पृ 211
71. वही, पृ 227
72. वही, पृ 219
73. वही, पृ 219
74. डॉ शिवाराम तिवारी - साहित्यवृत्त और काव्य भाषा, पृ 61
75. डॉ शत्रुरामनाथ पठवेंद्र, नव विंदु काव्य और विद्वेशन, पृ 338
76. डॉ वेला वाजपेयी, आधुनिक विंदु कविता में विश्लेषण, पृ 81
77. विंदु शाय वाघर-भाग 3, पृ 2208
78. डॉ रामचंद्र रामबाण, पृ 701
79. वेम्बर विकल्प, पृ 1117
80. डॉ रामनाथ विमल - विंदु साहित्य में विविध विद्वेशन, पृ 458
81. डॉ निर्मलनाथ शर्मा - विंदु काव्य में प्रतीक विधान
82. बांसवाड़ा रामबाण शुभां - भारतीय काव्य शास्त्र की वस्तुपर, पृ 282
83. वेला नाथ सिंह, आधुनिक विंदु कविता में विकश विधान, पृ 28
84. शुभां, विंदु कविता में तुङ्गनतर, पृ 364
85. वेला विंदु, विंदु कविता में विकश विधान, पृ 5
86. वाल्मीकि, विंदु वाय मार्ग रेमड टोलेडो वाय, जो,नौ इन डूवेंटा
87. ओव मार्ग मार्ग वेला, पृ 18
88. ओव मार्ग मार्ग ओव टोरेटो, पृ 5
89. शुभां वेला - सौन्दर्यशास्त्र के तत्व, पृ 259
90. ओव मार्ग मार्ग ओव टोरेटो, पृ 5
95. डॉ० नरेंद्र शर्मा - आधुनिक पास्मायत काल्य और समीक्षा के उपादान
   पृ. 94

99. डॉ० चन्द्रलाल - आधुनिक हिन्दी काल्य में पुत्रीक वाद, पृ. 16

100. दोहो, पृ. 15

101. दोही, पृ. 17

102. आर्थर लाइल विले, शीरक्षित सूचीकरण इनिटिएस, पृ. 134

103. रामदास धौरी - काल्य भाषा का स्वभाव, कल्पना मंद, 1963

104. भूपिय आमले, पृ. 47

105. दोही, पृ. 42

106. दोही, पृ. 42

107. दोही - दोही शास्त्र के लघु, पृ. 228

108. डॉ० रामदास धौरी - काल्य भाषा का स्वभाव कल्पना, मंद, 1963

109. रामदास धौरी - भूपिय आमले, पृ. 842

110. भूपिय आमले - मिथिला विकास अक्षर, मिथिला विकास

111. स्वयं ना घाटर का वागला वहरे प्रेमी निष्ठु

112. योगी, तिथि - काण्ड गोरे, पृ. 83

113. तिथि - तिथि की तिथि, पृ. 12

114. तिथि निष्ठुर योगी, शास्त्रिय गीतिक निष्ठु, पृ. 42

115. तिथि गुरुकृत्य तिथि, शास्त्रीय समाधान के सिद्धांत, पृ. 283

116. तिथि रामदास धौरी, योगी, पृ. 316
117. डॉ० गणेशचंद्र गुप्त - तारिक्तक निबन्ध, पृ. 45
118. डॉ० गोपाल जयनाथ - शास्त्रीय समीक्षा के विषय में, पृ. 300
119. डॉ० गणेशचंद्र गुप्त - तारिक्तक निबन्ध, पृ. 46
120. वही, पृ. 46
121. डॉ० गोपाल जयनाथ - शास्त्रीय समीक्षा के विषय में, पृ. 300
122. डॉ० श्रीमान चुंबर दास - सम और धैर्यों, पृ. 302
123. आचार्य रामचंद्र दुमल - गोस्वामी छुँकी-छाट, पृ. 47
124. डॉ० शशि शर्मा - गवानन माधव घुटनोद का तारिक्तक एक अवशेष, पृ. 233

---